ॐ

श्रीरत्नप्रभसूरिगुरुभ्यो नमः

श्रीमदुपकेशीयगच्छके मुनि

ज्ञानसुन्दर विरचित.

अथ श्रीगयवरविलास

अर्थात्

बत्तीस सूत्रोंमें मुर्तीसिद्ध.

प्रकाशक.

ओसीया तीर्थ.

प्रथमावृत्ती २००० द्वितीयावृत्ती १०००

वीर संवत् २४४३

कींमत ०-४-०

धी विद्याविजय प्रिन्टींग प्रेस–भावनगरमें
शाह पुरुषोत्तमदास गीगाभाई पांचभायासे मुद्रित.

प्रस्तावना ।

प्रिय पाठको ! बत्तीस सूत्रो में प्रतिमा की सूचना मात्र प्रतिमा छत्तीसी में दर्शाई थी उस पर स्थानकवासी साधु सतोक चन्दजी तथा ' ए. पी. ' जैन लस्करवाले ने अपनी अनादी प्रकृति अनुसार कुयुक्तियां लगाके बिचारे भद्रीक जीवोंको दीर्घ संसार के पात्र बनाने का प्रयत्न किया है इतना ही नहा बल्कि मेरे पर भी वृथा आक्षेप और अनार्य वचन से गालियों की बोछार की है परन्तु विचारने का विषय तो यह है कि श्री तीर्थकरों गुणधरो तथा पूर्व आचार्य्यों के वचन का भी तिरस्कार कर दिया तो मेरे को गालिया देने में आश्चर्य्य ही क्या है, लेकिन विद्वान् इनके लेख को पढेंगे तो अवश्य कहेंगे कि यह कृतघ्नी दयामार्गियों की दया का सूचक है, मेरे ज्यादा विवेचन करने की आवश्यकता नही है साधु का धर्म क्षमा करने का ही है। इसी से इन नादानों की बालचेष्टा पर ख्याल न करके केवल उपगार बुद्धि से ही इस पुस्तक को प्रारम्भ करता हुं।

पुस्तक लिखने का प्रयोजन प्रतिमा छत्तीसी में लिखे हुए अक्षर २ आगम अनुसार हैं तथापि आधुनिक समय में सम्यक

ज्ञान शून्य पुरुषों ने स्वकपोल कल्पित अनेक विकल्प उठाये है उनके लिये ३२ सूत्र का मूल सूत्रार्थ से अच्छी तरह समाधान क साथ में ' ए. पी. ' जैन की कुयुक्तियों का खण्डन स्पष्ट बतला दिया है माने न माने अख्तयार उन्ही के—अस्तु।

तत्त्व रसिक तत्त्व खोजी पुरुषों से निवेदन है कि उपर लिखे महाशय का लेख और हमारा लेख आदि से अन्त तक की समालोचना करे ताकि सत्या-सत्य का निर्णय होजावे, यत्—

[बुद्धिः फलं तत्त्व विचारणं च।]

एक बात और भी सुनाता हूं कि जब ये लोग तेरेपंथियों से चर्चा करते है तब तो हिंसा को कारण कहके कार्य शुभ परिणाम को मुखता में बतलाते है जैसे नदी की मच्छीयों को तलाव में पोच्छाणा में एक इन्द्री से पंचेन्द्री तक अनन्त जीवों की हिंसा होती है तो पिण परणाम सुद्धी से धर्म पुन्य मानते है अब जिन प्रतिमाका वर्णन आवे तब तेरेपंथियों के बच्चे बन बैठते हैं, हिंसा २ पुकार के भगवान् की भक्ति का निषेध करते हैं प्रिय सच बात यह है कि स्थानकवासी ३२-४५-८४ आगम में यह बतलावें कि जिन प्रतिमा वन्दना पूजनेसे आवे तथा अमुक साधु श्रावक प्रतिमा वंद पूजके नारकि गया

सोवो किसी सूत्र में है नहीं, न आजतक कोई ऐसा प्रमाण थानकवासी ने दिया। अब ३२ सूत्र में साधु श्रावक प्रतिमा-वदि पूजी है वो हम दिखाते हैं सज्जन बधुवों से निवेदन करता हू कि मेरे गृहवास में सस्कृत का अभ्यास नहीं था फेर स्थानक वासियों के पास दीक्षा ली परन्तु उनके अन्दर ऐसा (बढा) बन्द रखा था कि साध को व्याकरण नहीं पढाना इसी से मेरी व्याकरण पढने की आशा अपूर्ण ही रही इसी से इस पुस्तक में ह्रस्व दीर्घ आदि की भूल रह गई हो तो सज्जन जन कृपाकर सुधारकर मुझे सूचना देंगे तो उपकार के साथ स्वीकार करूंगा दूजी आवृती में सुधारी जावेंगी यह हमारी पुनः पुनः विनती है।

मीलणेका पत्ता—

[१] मु. फलोदी (मारवाड)
जीला जोधपुर.
जैन पाठशाला.

[२] जैन सभा–तीवरी [मारवाड]

[३] ओसीयातीर्थ [मारवाड]
जीला जोधपुर.

अनुक्रमणिका.





अर्हन्

अथ श्री गयवर विलास ।

अर्थात्

बत्तीस सूत्र में मूर्ति सिद्ध

प्यारे पाठको प्रतिमा-छत्तीसी में कहे हुये सूत्रो से प्रतिमा सिद्धि करके बतलाते है एकचित्त ध्यान देकर पढो ।

आदिमङ्गल पांच अक्षर

दोहा

अरिहन्त सिद्धने आयरिय, उवज्झाया अणगार ।
पंचपरमेष्टी एहने, वन्दुं वारम्वार ॥ १ ॥

अर्थ-पच परमेष्टीको नमस्कार करके स्तवन प्रारम्भ करता हू ।

चार निक्षेपा जिनतणा, सूत्रा में वन्दनीक ।
भोला भेद जाणे नही, जिन आगम प्रत्यनीक॥१॥

अर्थ—सूत्र में भगवान् का चार निक्षेपा यत् नामाजिणा जिणनांम। ठवणजिणा पुण जिणंदपडिमाउ दव्वजिणाजिणा-जिवा, भावजिणासमवशरणंथा ॥ १

श्री वीर प्रभु का चार निक्षेपा वन्दनीक है।

(१) वीर प्रभु का नाम लेना सो नाम निक्षेपा वन्दनीक सब जैनी मानते हैं ज्यादा विवेचन करने की आवश्यकता नहीं है

(२) वीर प्रभु की प्रतिमा स्थापना निक्षेपा वन्दनीक है इसीको आधुनिक समय में नामधारी जैनी * नहीं मानते परन्तु अपने गुरुगुरणी की 'प्रतिमा' 'समाधी' पगलिया 'फोटू' को मानते हैं जैसे—मारवाड़(प्रीगाम)स्थानकवासी साधू हर्खचंदजी की पत्थर की प्रतिमा है 'लुधियाना में मोतीरामजी साधू की समाधी' 'अंबाला में लालचंदजी की समाधी' और स्थानकवासी साधू साधवियों का संख्याबन्द फोटू मौजूद है उन्हीं की तो भक्ति-भाव उत्साहपूर्वक करते हैं जिसकी गति का भी निश्चय नहीं है और श्री परमेश्वर निश्चय मोक्ष पधारे हैं उन्हीं की स्थापना की भक्ति करने में हिचकते हैं अहो आश्चर्य२ बाजे २ ऐसे भी कह देते हैं कि यह पत्थर है अजीव है इस की भक्ति में क्या

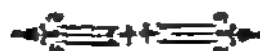
* स्थानकवासी।

सवैया ॥

मतिमा छत्तीसीमें रची, बत्तीस सूत्रकी साख ।
जैसे गण धर भाषिया, तैसा दिय मेदाख ॥ १ ॥
वृथा खंडन ते हनो, नकल निरुपण नाम ।
दुजो 'ए. पी' नेकियो, जिन अज्ञा वीरूदी काम ॥२॥
गलीछ भापी गालीयां, नहीं न्याय लवलेश ।
कइलो फैलायो जैनमें, जाने कोरट केस॥ ३ ॥
दोनों पर दया करी, विलास बणायो सार ।
पक्षपात दुरी करी, वांचे नर और नार ॥ ४ ॥
छपतो, लिखतो देखतो, अशुद्धि रही हो कोय ।
न्यूनाधिरू परमाद से, मिच्छामी दुक्खडं मोय ॥ ५ ॥
उगणीसे बहुतरे, माघ मास सुधिजान ।
तीपी तीथी तीजकी, आदितवार व्याख्यान ॥ ६ ॥
चर्म तीर्थीकर वीरको, तीर्थ ओसीया जान ।
गयवरचन्द सर्णोलियो, पाम्या जन्म परमाण ॥ ७ ॥

इति मुनि श्रीगयवरचंदजी विरचीत

गयवर विलास सम्पूर्णम्



जब श्री भगवान् *समोसरण में एक दिशा सन्मुख विराजते है और तीन दिशा मे भगवान् की मुर्ती स्थापन करी जाती हैं और ३ दिशा में भगवान् की वाणी श्रवण करे वे अपने २ मन में सर्व परखदा जाणे की भगवान् हमारे ही सन्मुख विराजे हैं प्रिय यह बात सब जैनी जानते हैं कदाचित् आप यह कहोगे कि इसी में वंदने का अधिकार नहीं है तो सुनो (सूत्र उववाइ में ऐसा पाठ खुलासा है यत् (अप्पेगईया वंदणवतीयाए अप्पे-गईया पुयणाभतीयाए) इसी से सिद्ध हुआ कि स्थापना निक्षेपो वंदनीक है और सुनो पांडवचारित्रमें द्रोणाचार्य की स्थापना करलेव्यो (भील) अर्जुन बराबर विद्या हासल करी है प्रिय इस बात को स्वमत परमत सब जानते है फिर इससे ज्यादा प्रमाण क्या चाहिये ।

(३) वीर प्रभु का अतीत अनागत सो द्रव्य निक्षेपा वंदनीक इसी में पेश्तर यह समझना चाहिये कि द्रव्य निक्षेपा किसको कहते हैं वर्तमान वस्तु अतीत अनागतकाल में रूपांतर है उसी को द्रव्य निक्षेपा कहते हैं जैसें श्रीवीरप्रभु के अतीत-काल में तीर्थंकरपणे का † निश्चय हो गया उसी दिनसे छद्मस्त

---

* गाथा १२ का अर्थ देखो. † भरत महाराज सरावकछतो मरीचायाने वंदणा करी ते द्रव्य तीर्थ कर जणके ।

१२ गुण ठाणे तक द्रव्य तीर्थंकर है और अनागतकाल निर्वाण हुवा पीछे 'भी' द्रव्य तीर्थंकर है यह सर्व जैनियों को वन्दनीक है।

(४) भाव निक्षेपा वीर प्रभु ३४ अतिशय पैंतीस वाणी अष्टप्रतिहार ये सब जैनियों को वदनीक हैं इति सक्षेप। ४ वंदनीक निक्षेपा कहे विशेष सूत्राक्षर ॥१॥ नाम, निक्षेपा (उववाई) तं महाफल खलु अरिहंताण भगवंताण नाम गोयस्स विसवणयाए। नाम निक्षेपा वदनीक है (२) स्थापना निक्षेपो वदणीक सूत्र आचारंग ठाणायंग समावायंग भगवती ज्ञाता उपासगदसा उववाई रायप्रसेणी जीवाभिगम उत्तराध्येन आदि बहुत सूत्रों में लेख हैं वो इसी स्तवन में अगाडी अच्छी तरह से खुलासा करेंगे क्रिये यह किताब ही स्थापना निक्षेपा के लिये ही विशेष बनी है सो देख लेना।

(३) द्रव्य निक्षेपा वदनीक है।

(१) सूत्र नदी जी में देवढगणी ×क्षमासणा + चोवीस पाठ देवलोक में गया हुवा ने वदणा करी है अभी भी अपने २ गुरु देवलोक में गये हुवों को सब जैनी वदते हैं (२) आवश्यक

× देवढगणी महाराज को २७ में पाठ दोनों फरीक मानते हैं।

सूत्रमें श्री आदिनाथ भगवान् के साधू चोवीसत्था में (२३) तीर्थंकर द्रव्य निक्षेपे को वंदणा करी है लोगस्समें (अरिहंते कित्ते-इस्सं चौवीसंपी केवलि) एवी द्रव्य निक्षेपा वंदनीक है फेर सुनो आवश्यक सूत्र साधु प्रतिक्रमण का पाठ (नमोचउवीसाय तिथय-राणं । उसभाइ महावीर पज्जवसाणाणं) (तथा नमोत्थणं संपति-काल में देते हैं ये भी द्रव्य निक्षेपो वंदनीक हैं इत्यादि ।

(४) भाव निक्षेपा उववाई आदि में वंदनीक हैं ।

इस रीति से भगवान् का चार निक्षेपा आगम प्रमाण से वंदनीक है यद्यपि भोले भाई कदाग्रह के वशीभूत होके वीत-राग के वचनों को उत्थापन करते हैं उनको शास्त्रकार प्रत्यनीक का है यत् (सूत्र ठाणायंग ठाणा ३ सुयंपडुच्चतउ पडिणिया पणत्ता-सुयपीडणीयाए अत्थपीडणीयाए तदुभयपीडणीयाऐ) अर्थः सूत्र आश्रय तीन प्रकार के प्रत्यनीक का है सूत्र नहीं माने वह सूत्र का प्रत्यनीक है (वैरी) अर्थ नहीं माने वह अर्थ का प्रत्य-नीक है (वैरी) सूत्र अर्थ दोनों नहीं माने दोनों का प्रत्यनीक है प्रिय मित्रो आप आत्मकल्याण करना चाहते हो तो सूत्र अर्थ सम्यक् प्रकारह आराधन करो इति

बत्तीस सूत्र के मांयने, प्रतिमा को अधिकार ।
साव धान हुइ सांमलो, पांमोसमकित सार॥३॥

अर्थ–बत्तीस सूत्र में प्रतिमा का अधिकार है व सावधान होके सुनो जिस से आपको सम्यक् रत्नत्रिय की (याने) समकित की प्राप्ति हो समकित ही जगत् में सार पदार्थ है॥३॥

समकित् विन चारित्र नहिं, चारित्र विण नहिं मोक्ष।
कष्ट लोच क्रिया करी, जन्म गमायो फोक् ॥४॥

अर्थ–समकित् विगैर चारित्र नहीं होता है और चारित्र विगैर मोक्ष नहीं है यत् सूत्र उत्तराध्येन अ० २८

नत्थिचरित्तं सम्मत्त, विहूण दसणेउभइयव्व ।
सम्मतचरिताइजुगव, पुव्वचसम्मत्त ॥ २९ ॥
नादसणिस्सनाण, नाणेणविणानहु न्ति चरणगुणा ।
आगुणिस्सनत्थिमोक्खो, नत्थिअमु रको स्सनिव्वाण॥३०॥

अर्थ सुगम है मतलब ऊपर लिखा है अब जिस पुरुष के समकित् नही है उसका लोचादिक कष्ट क्रिया कर्म बंध का ही हेतु है यत् उत्तराध्येन अध्येनवीस गाथा ॥४१॥

चिरंपिसे मुडरुईभवेत्ता, अथिरव्वये तवनियमेहिंभट्टे ।
चिरंपि अप्पाण किलेसइत्ता, नपारए होई हु संपराए॥

अर्थ–सुगम मतलब बहुत काल लोचादिक कष्ट करणा और

वृत्त तप आदि से अथिर है वह बहुत काल आत्मा को कष्ट करता ही संसार का पार न पहुंचे दीर्घ द्रष्टी से विचार करो तो दर्शन विवञ्नगा कि संसर्ग करणाही दुर्गति का कारण है उक्त सूत्र गाथा ॥ ४४ ॥

विसंतु पीयं जहकाल कुडं । हणइसत्थंजहकुग्गहियं ॥
एसो विधम्मो विसओववन्नो । हणइवेयालइवाविवन्नो४५

अर्थ—सुगम मतलब विस ओर शस्त्र के प्रयोग से जीव को एकभव में मर्णा होता है परन्तु कुगुरु की संसर्ग चतुर्गति संसार में भ्रमण कराते हैं इस से उक्त संगत को छोड के शुद्ध समकितधारी का संसर्ग करो जिस से आपका कल्याण हो इति ॥ ४ ॥

॥ श्री ॥

॥ ढाल १ ॥ आदर जीव क्षमागुण आदर ए देशी । प्रतिमा बत्तीसी सुनो भविप्राणी । सुत्रों के अनुसार जी ॥टेक॥ आचारांग दूजे श्रुतस्कन्धे। पन्दरमें अध्ययन मुजार जी ॥पांच भावना सम कित केरी ॥ नितवंदे अणगार जी। प्रतिमा ॥१॥

अर्थ—श्रीआचारांग सु० २ अ० १५ में दो प्रकार की भावना (याने) प्रशस्त १ अप्रशस्त २ कही है सो नीचे लिखता हूं ।

चार ज्ञान चौदे पूर्वधारी धर्म धुरधर श्रीमद्भद्रबाहु स्वामी कृत नियुक्ति मूलपाठ में प्रथम अप्रशस्त भावना।

यदुक्त पाणवह मुसावए। अदत्त मेहुणपरिग्गहे चेव॥
कोहेमाणेमायालोभेय। हवन्ति अपसत्था॥४५॥

भावार्थ—भावना दो प्रकार की है प्रशस्त भावना और अप्रशस्त भावना जिन में प्रणातिपात मृषावाद अदत्तादान मैथुन और परिग्रह तथा क्रोध मान माया और लोभ मे अप्रशस्त भावना जाननी।

दूसरी प्रशस्त भावना का पाठ।

दसणणाणचरित्तेनव। वेग्गोप होइपसत्था॥
जायजहातोय तहा। लक्खणवोच्छ सलक्खणओ॥४६॥
तित्थगराणभगवओ। पवयण पावयणि अइसइढीण॥
अहिगमणणमण दरिसण किदणओ पुयणा थुणणा॥४७॥
जम्माभिसेय णिक्खमण चरण णाणुप्पत्तीय णिव्वाणे।
दियलोय भवणमन्दर। णन्दीसरभोम णगरेसु॥४८॥
अट्ठावय मुज्जंते। गयग्गपय धम्मचक्केयाय॥
पासरहावत्तणय। चमरुप्पायं च वन्दामि॥४९॥
गणिय णिमित्त जुत्ती। संदिट्ठी अवितह इमणाण॥

पयएगन्त मुवगया । गुण पच्चाइया इमेअत्था ॥५०॥
गुणमाहप्पं इसिणाम । कित्तणं सुरणरिंदपूयाय ॥
पोराण चेइयाणियइइ । एसादंसणे होइ ॥६१॥

इस पर श्री शीलंगाचार्यकृत टीका में विस्तार किया है वह परन्तु पुस्तक वढजाने के भय से नहीं लिखा है विद्वानों के लिये इतना ही प्रमाण मजवूत है अगर किसी को देखना हो तो सूत्र मेरे पास मौजूद हैं देखके समाधान कर लेवें ।

ऊपर लिखे पाठ का भावार्थ

दर्शन ज्ञान चारित्र तप वैराग्यादिक में प्रशस्त भावना जाननी तिन में प्रथम दर्शन भावना जिससे दर्शन (सम्यक्त्व) की शुद्धी होती है उसका वर्णन शास्त्राकार करते हैं तिर्थंकर भगवन्त प्रवचन साचार्यादि युग प्रधान अतिशय ऋद्धि मत केवल ज्ञानी मन प्रजवज्ञानी अवधिज्ञानी चौदह पूर्वधारी तथा आमर्षौषधादि ऋद्धि वाले इतने सन्मुख जाना नमस्कार करना दर्शन करना गुणोत्कीर्तन करना गन्धादिक से पूजन करना स्तोत्रादिक से स्तवन करना इत्यादि दर्शन भावना जाननी निरन्तर इस दर्शन भावना के भावना से दर्शन शुद्धि होती है तथा तीर्थंकरों की जन्मभूमि मे तथा निष्क्रमण दीक्षा ज्ञानोत्पत्ति और

निर्वाणभूमि मे तथा देवलोक विमाणों में मन्दर (मेरुपर्वत) उपर तथा नदिश्वर आदि द्वीपों मे पाताल भवनों में जो शास्वतेचैत्य (जिनप्रतमा) है तिनको मे वदना करता हु तथा इसी तरह गिरि (शत्रुञ्जय तथा गिरनार) गजाग्रपद (दशार्णकूट) धर्मचक्र तक्षसिलानगरी में तथा आहिच्छत्तानगरी जहा धरणेंद्रने श्री पार्श्वनाथ स्वामी की महिमा करी थी रथावर्त्त पर्वत जहा श्री वज्रस्वामी ने पादपोपगमन अनसन करा था और जहा श्री महावीर स्वामी का सरण लेकर चमरेंद्रने उत्पातन करा था इत्यादि स्थानों में यथा सभव अभिगमन वन्दन पूजन गुणोत्कीर्तनादि क्रिया करने से दर्शन शुद्धि होती है तथा यह गणित विषय में बीज गणितादि (गणितानुयोग) का पारगामी है अष्टागनिमित्त का पारगामी है दृष्टीपातोक्त नाना विध युक्ति द्रव्य सयोग होती है, का जानकार है तथा इसको सम्यक्त्व से देवता भी चलायमान नहीं कर सकते है इसका ज्ञान यथार्थ है जैसे कथन करे हैं वैसे ही होता है इत्यादि प्रकार प्रवचनिक अर्थात् आचार्यादिक की प्रसंशा करने से दर्शन शुद्धि होती है इस तरह और भी आचार्यादिके गुण माहात्म्य के वर्णन करने से तथा पूर्व महर्षिओंके नामो किर्तन करनेसे तथा

सुरेंनरेंद्रादि की करी तिनकी पूजा का वर्णन करने से तथा निरन्तर चैत्यों की पूजा करने से इत्यादि पूर्वोक्त क्रिया करने वाले जीव की तथा पुर्वोक्त क्रिया की वासना से वासित है अतःकरण जिसका उस प्राणी की सम्यक्त्व शुद्धि होती है यह प्रशस्त दर्शन सम्यंकृत्वं सम्बन्धी भावना जाननी ॥ इति ।

इस लेख से स्पष्ट मालूम होगया होगा ज्यादा खुलासा अगाडी करेंगे ॥१॥

दूजे सूगडांगे छट्ठे अध्ययने। आद्र नाम कुमारजी ।
प्रतिमा देखी ज्ञान उपनो। पाम्यो भवनो पारजी ॥प्रतिमा २॥

अर्थ—सुगडांग सूत्र सु० २ अ० ६ आद्र कुमार श्री आदिनाथ परमेश्वर की शांतमुद्रा प्रतिमा देख के जाति स्मरण ज्ञान हुआ ।

श्री शिलांग आचार्य कृत टीका ।

यते व्याख्या अन्यदार्द्रक पित्रा जनइस्तेन राजग्रहे श्रेणि कराज्ञःप्राभृत प्रेषितं आर्द्रक कुमारेण श्रेणिक सुताया भयकुमाराय सनह करणार्थं प्राभ्रतस्यैवं हस्तेन प्रेषितं जनो राजग्रहेगत्वा श्रेणिकराज्ञः प्रभृतानि निवेदितान समानितश्च राज्ञा आर्द्रकप्रहितानि

प्राभृतानि चाभय कुमारा कुराय थतवान् कथितानिस्नेहोत्पादकानि वचनानि अलयेनाचिंति नूनमसौभव्यः स्यादासन्नासिद्धिको यो मया सार्द्ध यो मया सार्द्धं प्रतिमिछत्तीति ततोऽभयनप्रथम जिनप्रतिमा बहुप्राभृत्य युताऽऽर्द्रक कुमाराय प्रहिता इद प्राभृतमेकाते निरुपणीयमित्युक्तं जनस्य सोप्यार्द्रकपुरं गत्वा यथोक्तं कथयित्वा प्राभृतमार्पयत् प्रतिमा निरूपयतः कुमारस्य जातिस्मरणमुत्पन्न धर्मे प्रतिवुद्ध मनः अभय स्मरन् वैराग्यात् कामभोगे ष्वनासक्तास्तिष्ठति पित्रा ज्ञात माक्वचिद्सौ यायादिति पंचशत सुभटैर्नित्य रक्षते इत्यादि ।

भावार्थः—एक दिन आर्द्रकुमार के पिताने दूत के हाथ राजगृह नगरी में श्रेणिक राजा को प्राभृत (नजर–तोफा) भेजा आर्द्रकुमार ने श्रेणिक राजा के पुत्र अभयकुमार के वाइ भी स्नेह करने के वास्ते उसी दूत के हाथ प्राभृत भेजा दूतने राजगृह में जाकर श्रेणिक राजा को प्राभृत दिये राजा ने भी दूत का यथायोग्य सन्मान किया और आर्द्रकुमार के भेजे प्राभृत अभयकुमार को दिये तथा स्नेह पैदा करने के वचन कहे तब अभयकुमार ने सोचा कि निश्चय यह भव्य है निकट मोक्षगामी है जो मेरे साथ प्रीति इच्छता है तव अभयकुमार ने वहुत प्राभृत

सहित प्रथम जिन श्री ऋषभदेव स्वामी की प्रतिमा आर्द्रकुमार के तांई भेजी और दूत से कहा कि यह प्राभृत आर्द्रकुमार को एकांत में दिखाना दूत ने आर्द्रकपुर में जाके यथोक्त कथन कर के प्राभृत दे दिया प्रतिमा को देखतेही आर्द्रकुमार को जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न हुआ धर्म में प्रतिबोध हुआ अभयकुमार को याद करता हुआ वैराग्य से काम भोगों में आसक्त नहीं होता हुआ आर्द्रकुमार रहता है पिता ने जाना कभी यह कहीं चला न जावे इस वास्ते पांचसौ सुभटों करके पिता हमेशा उसकी रक्षा करता है इत्यादि—

इस पर (ए. पी. जैन) अभव्य आदि शब्द से इतना परिश्रम हमारे वास्ते उठाया है जो समय श्री जीनेन्द्रदेवों की भक्ती में लगाता तो महान् लाभ उपार्जन करता भोलेभाई आपने गयवरचंद शब्द का अर्थ तथा अभव्भी आदि कहा तो जब में करीब ९ वर्ष आपके टोलों के अन्दर रहाथा जब तो भव्भथा आचारी था अब मैं आपके टोलों को छोड के सत्य धर्म अंगीकार कर लिया तब अभव्भी हो गया क्या आपकी प्रवृत्ती की हम तारीफ करें आपकी गलीच गालियां के उत्तर विद्वनो के लिये इतना ही काफी है।

आचारंग सूगडांग दो गाथा नहीं मानने मै गालियो के सिवाय शास्त्र का कुछ भी प्रमाण नहीं दिया है। भद्रक जीवो कौ भ्रम में डालने के लिये (मूलटीका मूलटीका) ही की पुकार करी है बधुवो इस समय में विद्यादेवी के प्रचार से विद्वानो की सख्या वढ जाने से आपकी पुकार पर कोई ध्यान न देगा विद्वान ये विचार अवश्य करेंगे कि ४ ज्ञान १४ पूर्व के धनी (भद्रबाहु स्वामी) जिन नहीं पण जिन सरीखे उनके वचन को नंदीसूत्र में सम सूत्र कहा है यह बात प्रिय जैनियों को निसंक मानना ही पडेगा दूसरी बात यह है कि जब पास में दूसरा पक्ष खडा होता है तब पक्षपात भी खडा होता है सो तो मूर्ति उथापक का जन्म स० १५३१ में हुआ है प्रिय यह बात स्वमत परमत सब जानते हैं और श्री भद्रबाहु स्वामी वीर सम्वत् १७० में हुए जिनको करीब १८३१ वर्ष का फासला हो गया इतने वर्ष तक तो श्री भद्रबाहु स्वामी के वचन में शंका करने वाला नहीं हुआ अभी विद्वान स्थानक वासी लिखे पढे हैं वह तो जैसे तीर्थंकर का वचन वैसे ही भद्रबाहु स्वामी का वचन मानते हैं लेकिन कोई अनपढ समुत्सम पडित बन के मन में शका करते हैं उन महोदय से हम पूछते हैं कि आपको आ-

चरांग सूत्र की सब निर्युक्ती में शंका है कि जहां मूर्ती का अदिकार है वहां शंका है, तब तो कहना ही पडेगा कि सब निर्युक्ति में शंका नहीं केवल मूर्ति के अधिकार में शंका है तब तो प्रगट मालूम होगा कि आपको मूर्तीसे ही द्वेष है जिससे सर्व निर्युक्ति माननी और जहां मूर्ति का अधिकार आवे वहां संका करना जो निर्युक्ति टीका नहीं माननी तो बतलावो समकित विगैर चारित्र हो सकता है या नहीं जो समकित बगैर चारित्र नहीं होवे तो समकितकी भावना सिद्ध हो चुकी और आर्द्रकुमार कौन था किस नगरीमें रहता था किस कारण से प्रतिबोध (याने ज्ञान पाया) यह मूल सूत्र से बतलाना चाहिये जो अधिकार टीका से कहेगा तो टीकामें खुलासे प्रतिमा है सो हम लिख आये है।

अब आपका मूल सूत्र माननेका हठ है सोभी सुनलीजे अव्वल तो यह फरमावो कि आप मूल सूत्र के सिवाय कुछ मानते हो या नहि जो नहीं मानो तो हमारी बनाई सिद्ध प्रतिमा मुक्तावली प्रश्न तीजे में १०० मूल ३२ सूत्र के ही पूछे है उनका उत्तर मूल सूत्र से देवें*यहां पर आपसे इतना पूछते है मूल सूत्र मानते हो तो (णमोअरिहंताणं) ये जैनीयों का प्रथम सूत्र है इसका अर्थ करें ! [पूर्व] (अजी इसका अर्थ तो सीधा

* तथा प्रश्नमाला मे पुछा हुवा प्रश्न का उत्तर मुल सूत्रसे देवे.

ही है उत्तरपक्ष) वो मूल सूत्रसे फरमावें पूर्वपक्षः (णमोअरिहताणं) णमो कहे तो नमस्कार (अरि०) कहे वो वैरी (हता) कहे वो हणाया (ण०) कहे वो वाक्य अलंकार ठो यह अर्थ कर दिया (उत्तर पक्षः मित्र अरिहंत कोण से वैरी को हणिते हैं पुर्वपक्षः) अजी अरिहंत कर्म वैरी को हण तेहे (उत्तरपक्षः) ख्याल रखो आप कि कृतघ्नी प्रतिज्ञा का भंग होते हैं देखो मूलमें तो कर्म का गंध भी नहीं है फेर आप किस अक्षर का अर्थ कर्म करते हो सो बतलावो कारण आप तो मूल वगैर नहीं मानने वाले हो (पूर्व पक्ष) अजी साहब सम्बन्ध मिलाने के लिये तो प्रक्षेप कहना ही पडे नहीं तो सम्बन्ध भि टूट जाता है (उत्तर पक्ष) मित्र फेर टीका मानणा मे किउ हिचकते हो दीर्घ दृष्टि से विचारो टीका उसका ही नाम है जो सम्बन्ध को मिलावे देखो आचारांग मे पंचमहाव्रत्ति की भावना कही है तो महाव्रत समकित वगैर नहीं होता है जिस मे ही श्रीभद्रबाहु स्वामी के संबंध पर समकित की भावना कही है और आर्द्रकुमार के पीछले भव का संबंध यहा है उन भगवान का वचन सत्य मानोगे तब ही आपका कल्याण होगा जो आप को प्रतिमा से ही द्वेष हो तो खुला २ कह देना चाहिए कि सूत्र में तो है लेकिन हम नहीं माने तो आप

और हम को एतना परिश्रम तो नहीं करना पडता यह हमेशा स्मरण में रखना कि अब आप की माया वृत्ति चलने की नहीं है लो ? आप को मूल सूत्र तो प्रमाण है देखो इस में भी पीछे नट नहीं जाना ।

सूत्र भगवती जी स० २५ उ० ३

सुतथो खलु पढ़मो । वीओ निज्जुत्ति मिस्सिओ भणिओ ।
तइओयनिरविशेसो । एसविहिहोइ अणु ओगो ॥ १ ॥

अर्थ–प्रथम निश्चय सूत्रार्थ देना दूसरा निर्युक्ति सहित देना और तीसरा निर्विशेष (सम्पूर्ण) देना यह विधि अनुयोग अर्थात् अर्थ–कथन की है इस सूत्र पाठ में तीसरे प्रकार की व्याख्या में भाष्य चूर्णि और टीका इन का समावेश होता है ।

यह मूल सूत्र में निर्युक्ति है वो नहीं मानी तो मूल भगवती जी भी नही मानी ? कहो अब भी आप के दिल में कुछ भ्रम है आप ने लिखा कि जड वस्तु की भक्ति करने से तुम कोजड वनादेंगे इत्यादि यह लेख आपका कितने दर्जे पर पोचा हैं भगवान तो फरमाते हैं कि चेतन का जड तीनकाल में नहीं होता है और हम जो वीतराग की उपासना करते हैं सो हमें धीड विश्वास हैं कि वीतराग हम को भी आप सरीखा वना देंगे परन्तु आप भी तो पुस्तक पत्रे की उपासना करते हो ! अस्तु

आगे लिखा है कि प्रतिमा देख के तुम को ज्ञान तो नहीं हुआ इत्यादि मित्र मुझे तो क्षउपसम माफिक ज्ञान है मगर तप संयम तो आप भी मानते हो तो फेर तुमारे गुरू जी को ज्ञान नहीं उत्पन्न होनेसे तप सयम ही निष्फल हुआ यह आप की अज्ञान दशा है देखो प्रतिमाके दर्शन से आर्द्रकुमार को ज्ञान उत्पन्न हुआ सो हम लिख आये हैं।

आगे आचाराग और प्रश्न व्याकरण का अधूरा पाठ लिख के हिंसा २ पुकारी है इत्यादि ।

अव्वल तो यह सूत्र पाठ ही असम्बन्ध अधूरा लिखा है सपूर्ण देखना हो तो हमारी बनाई सिद्ध प्रतिमा मुक्तावली प्रश्न चौथे में मूल सूत्र अर्थ सम्बन्धसे*है यह पाठ अनार्य मिथ्या दृष्टि के वास्ते फरमाया है यद्यपि अज्ञान के मारे नाम जैनी धरा के भी मदबुद्धियों की पक्ति में मिलने का प्रयत्न किया है प्रिय जैनी न तो हिंसा मे धर्म मानते हैं न जैनीयों के आगम में हिंसा मे धर्म कहा है न जैनी हिंसा का उपदेश करते हैं आप झूठा कलक जैनियों पर लगाते है न जाने आप की क्या गति होगी।

अब हम हिंसा अहिंसा का खुलासा करते हैं सो ध्यान देके सुनो——

---

* सक्षेप गाथा ग्यारमी का अर्थ में

जैनी अहिंसा और हिंसा की समालोचना। स्थन०

	जैनियों में धर्म उन्नति शासन उन्नति जाति उन्नति आगम या परंपरा अनुसार प्रवृत्ति में हिंसा होती है उस को जैनी सरुप हिंसा मानते हैं।		स्थानक वासियों की मान्यया मूजब धर्म उन्नति शास्त्र उन्नति या जाति उन्नति में प्रवृत्ति में हिंसा होतीहै जिस को स्थानक वासी बोध बीज का नास या मंदबुद्धि या नरकगामी मानते हैं।
१	साधु ग्राम नगर विहार धर्म सासन उन्नति के लिये करे उस में (हिंसा होती)। वीसरूप हस्या है	१	साधु ग्राम नगर विहार धर्म सासन उन्नति के लिये करे उसमें हिंसा होतीहै।
२	साधु को रस्ते जाने नदी आवे तो आज्ञा मूजब उतरते हैं इस में हिंसा होती है। पुर्ववत्	२	साधुको रस्ते जावते नदी आवे तो उतरते है इस में हिंसा होती है।

३	साधु को गोचरी जाना पडे लेहण करना गुरु को वदना करना जिन आज्ञा है इस में भी हिंसा है । पुर्व०	३	साधु को गोचरी जाना पडी लेहण करना गुरु को वदना करना इस में भी हिसा है ।
४	साधु को वरसते वर्षातमें ठले मात्रा जाना इसमें भी आज्ञा है हिंसा अवश्य होती है । पुर्ववत्	४	साधु को वरसते वर्षाद मे ठले जाना इस में भी हिंसा अवश्य होती है ।
५	श्रावक कान्फ्रेन्स में हजारों लोग एकठ्ठे होते हैं शासन उनति करते हैं । पुर्ववत् (हिंसा)	५	श्रावक कान्फ्रेन्स में हजारो लोग इकठ्ठे होते हैं शासन उन्नति करते हैं । (हिंसा)
६	शास्त्र लिखने में छपाने में शासन उन्नति है । पुर्ववत् (हिंसा)	६	शास्त्र लिखने में छपाना में शासन उन्नति है । (हिंसा)

७	कॉलेज पाठशालादि में धर्मशिक्षा देनी शासन उन्नति। पुर्व० (हिंसा)	७	कॉलेज पाठशालादि में धर्मशिक्षा देनी शासन उन्नति (हिंसा)
८	बोरडिंग १ हुनरशाला २ गुरुकुल ३ बालाश्रम ४ आदि पुर्व० (हिंसा)	८	बोरडिंग १ हुनरशाला २ गुरूकुल ३ बालाश्रम ४ आदि (हिंसा)
९	मन्दिर बनाते हैं।	९	स्थानक पोपदशाला बनाते है।
१०	भगवान की मूर्ति कराते हैं साधुओं का फोट्ट उतारते हैं।	१०	+ अपना गुरू की मूर्ति समाद पगलिया साधुओं का फोट्ट कराते है।
११	तीर्थयात्रा शत्रुंजय गिरनार शिखरजी केसरिया जी आदि जाते हैं।	११	कितनेक तीर्थयात्रा करते है कितनेक नहीं करते है वद मैरू भवानी रामदेवजी आदि को ध्याते हैं।
१२	जिन प्रतिमा की भक्ति करेत है।	१२	गुरू गुरणी की मूर्ति समादि पगलिया आदि की भक्ति करते है।

+ मारवाड (गीरी) गाम में हरखचन्द साधु कि पत्थर की मुर्ती है।

१३	दूर देश साधु को वदणे को जाते हे।	२१	दूर देश साधु को वन्दणे को जाते है
१४	गुरू को लेने को सामने जाते है नगर प्रवेश अति उत्साह से कराते है साधु पौचाने भी जाते है।	१४	गुरू को लेने को सामने जाते है नगर प्रवेश अति उत्साह से कराते है साधु को पौंचाने भी जाते है।
१५	पर्युंषण में तपस्या और देव गुरू की अधिक भक्ति करते ह।	१५	पर्युंषण में तपस्या और साधर्मी की भक्ती करते हे ओर भट्टी भी अधिक जलाते है।
१६	दीक्षा महोत्सव करते है।	१६	दाक्षी महोत्सव करते है।
१७	साधु मृत महोत्सव करते है।	१७	साधु मृत महोत्सव करते है।
१८	स्वामी वत्छल करते हे।	१८	दया पालते हे। लाडु खाते है।
१९	साधु अपना लेख छापे में छपाते है।	१९	साधु अपना लेख छापे मे छपाते है।

शासनकीं उन्नति कीं समालोंचना।

१	रजुस्वला धर्म पालते हैं।	१	विशेष रजुस्वला नहीं पालते है कितने ही तो कहते है कि फोडा फूटा है इस में क्या।
२	शास्त्रजी की असातना टालते है और बहुत भक्ति करते हैं।	२	शास्त्रजी को सिराणे दे देते हैं और भक्ति पूजा नहीं करते है असुची हाथ भी लगा देते है।
३	रात्री पणी रखते है।	३	रात्री को पाणी नहीं रखते है आरे दावा करता है।
४	कपडा आदि पणी से धोते है।	४	कपडा आदि नोपाणी*से धोते है।
५	सूतक मृतक के घर का आहार पानी नहीं लेते है।	५	सूतक मृतक के घर का आहार पानी ले लेते है।

* नीपाणी नाम पेशाबका रखा है।

६	क्षत्री वैश्य ब्राह्मण सिष्य बनाते है इनका आहार लेते हैं ।	६	इनके सिवाय नाई जाट कुमार मेणा तेली आदि को भी ले लेते है । और इनका घरका आहार भी खाते है ।
७	हलवाइयों के कढाईयों का धोवण नहीं लेते हैं ।	७	बाजार में हलवाइयों की कढाइया बाजे २ कुत्तादिक का झूठा पाणी भी ले लेते हैं ।
८	साधु गृहस्थी के घर में धर्मलाभ देके प्रवेश करते हैं ।	८	साधू चोर की तरह गृहस्थ के घर में जाते हैं वहा पर उनकी उपाजी बहु बेटियो को देखते हैं इसमे कैसी शासन की हीलना होती है ।

दया हिंसाकी समालोचना ।

१	बिद्दल का आहार नहीं लेते हैं ।	१	कितेन एक तो बिद्दल को समझते ही नहीं जो समझते हैं वो लोलपीपणा से या कठण वृत्ति से छोड नहीं सकते असख्य जीव उत्पन्न होते हैं वो खाते है ।

२	अभक्ष अनंत कायका गृहस्थीको पच्च खाण करातेहै और आप भी नहीं खातेहै	२	अभक्ष अनन्तकाय नहीं खानेका गृहस्थियोंको उपदेश करतेहैऔरआप खातेहै
३	वासी आहार जो रस चालत जिस में तार बन जाता है ऐसा नही लेतेहै	३	वासी आहार लेते है और लालिया (तार) जीव नमीं वरदते है।
४	गृहस्थी का झूठा आहार नही लेते	४	गृहस्थी का झूठा आहार लेते है।
५	वर्तनों का झूठा पाणी जिस में विद्दल आदि हो वो नही लेते है।	५	ले लेते है। और दान्ना कर्ते है
६	गरम पानी पीते है। और निर्बंद धोवण भी लेते है	६	काचा पानी के घडे में थोडीसी राख आटा दुद ओले कालाहूनाख के पी लेने है कितने ही गरम पानी भी पीते है
७	मुहपती हाथेंमे रखतेहै बोलतें समय यतना के लिये मुँह आगे रखते है।	७	मुहपतीसें रातदिन मुँह बंधा रखते है और उनके श्लेष्म नाक के मल आदि से असंख्य मनुष्य उत्पन्न होते है

मुहबंदण संवत १७०८ में लवजी ढुंढक साधुने पन्थ चलया है।

प्रिय ! ये तो नमूना लिखा है ऐसे २ अनेक बोल है जितनी शासन की निंधा हो रही हैं सब इन्हीं लोगों की ऊपर लिखी प्रवृत्ति का ही कारण है अब स्वय विचार कर लेवें कि हिंसाधर्मी कौन है क्या आपने समवायांग सूत्र नहीं सुना आपका अपराध दूसरे पर डालना से महा मोहनी कर्म बंधता है आज आप के गुरु लुका जी जगत में नहीं हैं तब ही आप हिंसा की गठर चला रहे हो लुका-जी मोह कर्म के उदेसे जिन प्रतिमा उथापी थी परन्तु तुम्हारे सरीखी हिंसा की प्रवृत्ति नहीं चलाई थी जो कि तुम्हारे सरीखी हिंसा प्रवृति रखता तो कृतघ्नी पथ कभी नहीं चलता।

(प्रश्न) क्योंमहात्माजी लुकाजी और अबी के स्थानक वासीयों की प्रवृत्ति एक है या भिन्न भिन्न है।

(उत्तर) पाठको ! इन की प्रवृत्ति में जमीन आसमान का फर्क है।
(प्रश्न) कृपा कर हमें भी सुनाइये।

(उत्तर) लो सुनो परन्तु चमकना नहीं, नमूना सुनाता हुं।

लुकाजीकी प्रवृत्ति व अबीके स्थानकवासीयोंकी प्रवृत्ति ।

१	व्याकरणको व्यादिकरण मानते थे ।	१	व्याकरण न्याय कोश अलंकार आदि पढते हैं ।
२	३२ सुत्रके सिवाय कुछ नही मानते और नही वांचते थे ।	२	टीका भाष्य चूर्णी नियुक्ति आदि वांचते ।
३	रास चोपियोंको सावद्य के है के नही वाचते थे ।	३	रारा चोपीयां मोटे मोटे पुज्य वाचते है ।
४	अन्यमत के पंडितोंसे नही पढते थे	४	अब अन्य मतोंके पंडितों से पढते हैं
५	मुहुपती हाथ में रखते थें ।	५	दिनरात मुख बधा रखते हैं ये प्रवृती लवजीसे चली है ।
६	विदल आहार नही खाते थे ।	६	खाते हैं और दावा करते हैं ।

७	गोचरी की झाली साधू हाथ की कलाई पर लाते थे आहार गृहस्थी को नही दिखाते थे।	७	अभी हाथ में लाते है घर २ में आहारदिखाते है कोइ जगा पाने का आहार देराके बालक रोने लग जाते है
८	तीर्थयात्रा को नहा जाते थे।	८	सत्यावध लुकागच्छके साधु यती श्रीपुज्य श्रावक आदि जाते है
९	स्थानक धर्मशाला भी नहा धराई थी	९	विशेष गामों में स्थानक धर्मशाला होते है
१०	साधु नदूधर की छाती पर गाठ नहीं लगाते थे।	१०	अब खूब कसके गाठ लगाते है आर चोलपटा फकीरीका तमलकी परे पहरते है
११	सव्याबन्द श्रावक दूर देशोंमे साधु को वन्दने को जाना और चतुर्मासा पर्युषण मे भटिया चलानी इत्यादि चाले रही थी इत्यादि अनेक बोल है पुस्तक बढ जाने के भयसे नहीं लिखा है।	११	सत्यावद श्रावक दूर देश साधु वदने को जाते है और चोमासा पयुषण मे भटिया चलाते है कोई गांवमे तो विचारे साधारण गृहस्थो पर १००—५० आदमी जिमाने का दंड पड जाता है।

अव भी आपकी कलइ खुलने में कुछ कसर रही है इस से ज्यादा देखना हो तो अन्य पुस्तकों में देख लेना* आयंदा से कुयुक्तियां करने की प्रवृत्ति छोड देना ये आप के हित के लिये ही अपना अमोल समय इस कार्य में लगाया है स्थानक वासी समाज पर मेरा किंचित मात्र भी द्वेष भाव नहीं है बलके मेरे पर जितना स्थानक वासियों का उपकार है वह हमेसा मानता हूं प्रति उपकार के लिये ही परिश्रम उठाया है।

॥ इति प्रथम द्वीतीय गाथार्थ ॥ २ ॥

ठाणायंगेचोथेठाणे, सत्यनिक्षेपाच्यारजी ।
दसमेठाणेठवणासच्चे, इमाभाख्योगणधारजी ॥ ३ ॥

अर्थ ठाणायंग ४उ० २ पाठ [चउव्विहे सच्चे पणंते तंजहा णामसच्चे ठवणासच्चे दव्वसच्चे भावसच्चे] ।

अर्थ टीका (सत्यसूत्रं नाम स्थापना सत्ये सुज्ञाने द्रव्य सत्य मनुपयुक्तस्थ सत्यमपि भावसत्यंतु)

स्थानक वासियों का माना हुआ टब्बा अर्थ चार प्रकारें सत्य साचूं कह्यो ते कहेवै नाम सत्य ते रिषभादि नाम सत्य छे १ स्थापना सत्य भगवंतनी प्रतिमा २ द्रव्य सत्य जे जीव जिन थासे ३ भाव सत्य ते प्रत्यक्ष बैठा जिन ४

---

* ढूंढक चीरतावली या कुमती कुठारमें देखो ।

ठाणांग सूत्र ठाणा १० मे दस प्रकार का सत्य (ठवणा सत्ये टीका (सत्य स्थापना सत्य यथा अजिनोपि जिनीय मनाचार्यो प्याचार्योयमिति)

स्थानक वासियों का माना हुआ टब्बा अर्थ (ठवणा) जिन (वीरे) जिन प्रडिमा आचार्य के (वीरे) स्थापनाआचार्य ते सत्य इम गणधर भगवान भाष्यो ।

जैसा सूत्र में वैसा प्रतमा छत्तीसी में तद्यपि (ए पि) ने लिखा है । गयवरचद ने लिखा वैसा सूत्र में नहीं है ये लिखना सत्य है या मिथ्या है पाठक वर्ग स्वयं विचारलें।

आगे ठवणासत्य को व्यवहार सत्य कहके लकडी के घोडे के हेतु लगाये है इत्यादि विचार करो साधु लकडी के घोडे को घोडा कहते है तो सत्यभाषा है ' तो फिर वीत राग देव की प्रतिमा को वीतराग कहने में क्यों शरमाते हैं और मूर्ति को पत्थर जड कह के ससार विर्द्धि क्यो करते हो ।

(च्यार निक्षेपा वंदणीक दूजे दुहा के अर्थ में देख लेना) आगे एक आचार्य का दृष्टांत दिया है उनका मतलब तीन निक्षेपा शून्य बतलाया है ।

प्रिय पाठको (एःपी) भगवान् का नाम स्थापन द्रव्य तीन निक्षेपा तो शून्य कहते हैं और चौथा भाव निक्षेपा इस कुल में है नहीं ? जब तो भगवान् का शासन ही विच्छेद हो गया; वाहरे नास्तिक ले सुन मैं निक्षेपेका दृष्टांत सुनाता हूं।

एक विदेशी ने लापरचन्द स्थानक वासी से पूछा कि मुझे किसी महात्मा के पास धर्म श्रवण करना है तब (स्थान०) कहा की हमारे साधू पूज्य पकोड़ीमल जी दिल्ली तर्फ विचरते हैं विदेशी ने कहा कि मैं उनको नहीं जानता हूं वो कैसे हैं उन का नकशा (फोटू) हो तो बतलावो (स्थान०) हम स्थापना नहीं मानते हैं जावो हर किसी ग्राम में पूछ लेना तब (विदेशी) वहां से चला रस्ते में पूछते २ एक नगर में कूंडा पंथी साधू पकोडीमल जी था खबर होने से विदेशी उन के पास गया कूंडा पंथी साधू ने उपदेश देके अपना शिष्य बना लिया अस्तु।

दूसरा दृष्टांत एक विदेशी सत्यचन्द्रने किसी जैनी से कहा कि मुझे किसी महात्मा से धर्म सुनना है (जैनी) सिद्धाचलजी के आस पास धर्म धुरंधर जैनाचार्य श्रीधर्म प्रभाकर सूरि विचरते हैं। उनके पास पधारो (विदेशी) वो आचार्य कैसा है तब (जैनी) एक पुस्तक विदेशी को दी इस को पढो (विदेशी) पुस्तक हाथ में लेके देखते ही प्रथम आचार्य महाराज का शांत मुद्रा

फोटू दृष्टिगोचर हुवा इतने ही में सम्यक्त्वरत्न की प्राप्ती होगई आगे देखे तो आचार्य का गृस्तावास की वाल अवस्था का चरित्र और फोटू देखा फेर योवन अवस्था का चारित्र और फोटू आगे व्रतधारी का चारित्र और फोटू देखा ये तीनुं अवस्था देखके सिद्धाचल जीकी तरफ चला मारगमे आचार्यका नाम पूछता२ एक नगर आ पौहुचे वहां एक धर्म प्रभाकर नामका आचार्य सुनकर विदेशी उन के पास गया परन्तु मुह वहां देख के पीछा आने लगा तब (ए-पी) सरीषा कदामही (विदेशी को कहने लगा अजी भाई धर्म प्रभाकर आचार्य यही है विदेशी बोला नहीं जी नहीं उन आचार्य का फोटू मेरे पास हैं सो देखो फेर देखने मे सब का चित्त शान्त होगया (विदेशी) आगे गिरनार की गुफा में वह नामऔर फोटू वाला आचार्य ध्यानारूढ देख वदना नमस्कार कर सेवा में उपस्थित हुवा फिर आचार्य महाराज का ध्यान का समय पूर्ण होने से आसन पर विराजे इतने मे तो दो आदमी आचार्य के पास आये आचार्य महाराज ने अति गभीरता मधुर धुनि से वीतराग प्रणीत धर्म सुनाया लेकिन उन मिथ्यात्वियों को कुछ भी असर न हुवा । तब (विदेशी) ने विचारा कि निक्षेपा तो निमित्त का कारण है उपादान् कारण तो अपनी आत्मा ही है तो

पण कारण की आवश्यक्ता है जिससे मैं ने इसी आचार्य महाराज के स्थापना से ही धर्मको प्राप्त किया हैं और २ आदमियोंको भाव निक्षेपे से ही धर्म प्राप्त नहीं हुवा । अस्तु

पाठक वर्ग ! दोनों दृष्टांतों को ध्यान में रक्खो प्रथम दृ-ष्टांत में तो कारण स्थापना को नहीं मानी तब भाव कार्य को ही खो वैठे जो कि कारण स्थापना (फोटू) पास में होता तो कुंडा पंथियों में मिल के दिर्घ संसारी न बनता । अस्तु

दूसरा दृष्टांत का सारांश पास में (फोटू) था तो मुहबंधे के जाल से वच गया और आचार्य की ४ अवशता और च्यार निक्षेपों के स्वरूप को ही जान लिये और कारण कार्य का भेद को भी समझ लिये ये कथन सुगम है ज्यादा विवेचन नहीं किया है आगे सवैया कुंडल्या लिख के वहादुरी दिखाई है इस वास्ते मेरे पास भी १००।२०० मौजूद है परन्तु वहुत जनों का दिल दुक्खे वैसा लिखना उचित नहीं समझता हूं

आगे लिखा है तू क्यों फजीती करवाता है इत्यादि बंधव फजीती सत्य की होवे के असत्य की जो असत्य की है तो आप का लेख पढके चीमटीवर सकर आप के मुंह में हर कोई

दिये सिवाय नहीं रहेगा सत्य का व्याख्यान तो श्रीमन्दर स्वामी आप का मुखारविन्द से हमेशा करते हैं इति ॥ ३ ॥

अंजनगिरिने दधिमुखा। नन्दीश्वरद्वीप मुजार जी। बावन मन्दिर प्रतिमा जिनकी। वंदे सुर अणगारजी प्र० ४ ॥

अर्थ—ठाणाग सूत्रके चोथे ठाणे उ० २ बहुत विस्तार है सपूर्ण लिखे तो ग्रन्थ, बढ जावे, इसीमे जितना प्रयोजन है सो पाठ

(चतारी अजणगपव्वया पणता) * ~ ~ चतारि जिण पाडिमउ सव्व रय णा मइयाउ स पलि अक णि सणाउ थूभाभिमुही उ चिठति तंजहा रिसभा वद्धमाण चन्दाणणा वारिसेणा * ~ ~ चतारि सिद्धायअणा पणता) ~ ~ ~ चतारी दहिमुहगपव्वया पणता) इत्यादि मूल सूत्र का पाठ है ज्यादा खुलासा देखना होतो सूत्र जीवाभिगमजी में नदिश्वरद्वीपका अधिकार मे अजन-गिरि ४ पुष्करणी बावी १६ दधिमुखा १६ रतीधरा ४ राउय-ध्यानी १६ सिद्दायतण २० जिनप्रतिमा २१६० मुखमडप २० पिछाघरमडप २० स्थुभ ८० स्थुभपासे जिनपडिमा ३२० चैत्यवृक्ष ८० इन्द्रध्वज ८० पुष्करणी ८० वनखड ३२० म-

युगलिया ४८००० गौमाणासिया ४८००० इतना अधिकार मूल पाठमें है और ३२ कनकगिरि सिद्धायतण जिन पडिमा सहित वृत्ति में है प्रिय यह वात जैनी अच्छी तरह से जानते ५२ चैतालय नन्दीश्वरद्विप में है उनकी देवता अठाई चौमासी सम्मत्सरी या जिन कल्याण में यात्रा करते है इसका लेख जिवाभिगम जंवूद्विपन्नत्ति आदि सूत्रों में प्रसिद्ध है सायद आपको अणगार वांदवा में शंका होतो सुन लीजे भगवती सूत्र स० २० उ० ९ चारण मुनि ।

पत्--वीइएणं उप्पाएणं णंदिसरे दिवे समोसरणं
करेइतहिं चेइआइ वन्दइवन्दइत्ता

विस्तार ७ मी गाथा अर्थमें देखो ।

अर्थ—जंगा चारण मुनि दूजे उत्पात् में नंदिश्वरद्वीप में समोसण करं वहां का चैत्य (प्रतिमा) वन्दे

वन्धव ये गोल मोल हैं के मूल सूत्र का पाठ है आगे लिखा है कि सूत्र पाठ नहीं लिखेगा तो अनन्ता तिर्थकरो का चोर इत्यादि ।

प्रिय वन्धव अनन्ते तीर्थंकर गणधर के फरमाये हुये सूत्र

पाठ मैंने लिख दिया है इसको नहीं माने वोही चोर है सत्य का डका रणकार करता ही रहेगा इति ॥ ४ ॥

थापनाचारजचोथेअंगे द्वादशठाणामांयजी । सतरमे समवायेगे जंघाचारण प्रतिमा वन्दन- जायजी प्रति० ५ ॥

अर्थ—समवायंग सूत्रका वारमा समवायंग का पाठ

यत्–दुवालसावत्ते किंत्तिकम्मे प० त० दूउणयंजहाजाय किंतिकम्मं वारसा ायवउसिरे तिगुत्तेदुपवेसएगनिरक्मण

अर्थ—*स्थानक वासियों का माना हुआटब्बा अर्थ वारे आवर्त माहें तेकृतिकर्म वादणा कह्या भगवंते श्रीवर्द्धमानस्वामी ऐ-तेकहैछे वेअवनत वेवेलामस्तक नमाडवो गुरुनिथापना कीजे तेह थकी अउठ हाथनेगला रहिपडिकमीए अउद्दहाथमाहि अवग्रहन्-हिये उस्थाभका इन्छामिखमासमणे कहिए विहु वादणे बिहु वेला मस्तक नमाडिये पछे अवग्रहमाहिं आविये यथा जातमुद्रा जन्म अवसरी बालक निपरे वलटाभीरहाथजोडिरही कृतकर्म वादणा १२ आवर्त्त छवेला गुरुनेपगेवादणाकीजे अहो काय काय ए पाठ कहि बिहुवेलाथइ १२ आवर्तनथयाचोसरा ४ वेलागुरुने पगे मस्तक

नमाडिये त्रणीगुप्ती मन वचन कायानी गुप्त कीजै उपदेश वेवेला वांदणाने अर्थे अवग्रहमांहि आवेने एक निखमण अवग्रहबाहिरि पहिले वांदणे एकवेलानिकलि वीजेवेलागुरु पगे बैठाज त्रणीस समापी एह पाठ कहो एक समवायंग वृत्तिनो भाव इसमें स्थापना आचार्य खुलासे कहा है ।

जंघाचारण २ मुनि जीनप्रतिमा वांदणे को जाते हैं सूत्र समवायंग ठा० १७ ॥ मूल पाठ

यत्-इमीसेणं रयणप्पभाए पुढवीए बहुसम रमणिजाउं भूमी भागाउ सातेरगाई सत्तरसजोयण सहस्साइं उंड्ढंउप्पइता ततोपच्छ चारणाणं तिरियगती पावत्तती ।

अर्थ टीका में बहुत विस्तार है ।

अर्थ स्थानक वासियों का माना हुवा टव्वा अर्थ इणी एरत्नप्रभा पृथ्वी विषै घणी, रमणी क समोभूमिभागछै तेह थकी जाजेरी बेकोस अधिक सत्तरे जोजन सहस्र लगे उंचोउत्पति उडीने ए तले, लवण समुद्रनी सिखालगे उं चाउत्त ति तिवारे पछे जंघाचारण विद्याचारणनी तिरछीगती पर्वततले तिरछी द्विपे रुचिक दिपे एमनंदिश्वरद्वीपे जीनप्रतिमा वांदिवाजाइ जैसा सूत्रार्थमें

या वैसाही प्रतिमा छत्तीसीमें लिखा है ।

तदपि (ए पी) कहते हैं गुरुकी वदना देनी थापनाचार्य नहीं है इत्यादि ।

बधव किसि गुरु गम् से सूत्र सुणो जो स्थापनाचार्य न हो तो गुरु आदेश किसका लेवे वन्दना किसको देवे (अहो कार्यं काय सफासं) किस को कहे ।

(पूर्वपक्ष) हम थापना नहीं माने साक्षात् गुरु को वंदना करें ।

(उत्तरपक्ष) तुह्मारे गुरूजी वदणा किस को करें ।

(पूर्वपक्ष) हमारे गुरूजी ईशान खूण में वदना करते हैं ।

(उत्तरपक्ष) खूण तो आजीव है ।

(पूर्वपक्ष) नहीं जी ईशान खूण में श्री मन्दरस्वामी को वन्दना कर प्रतिक्रमण आदि की आज्ञा माग लेते हैं ।

(उत्तरपक्ष) भरत खेत्र में शासन किसका है ।

(पूर्वपक्ष) महावीर स्वामी का है ।

(उत्तरपक्ष) फेर आज्ञा श्री मन्दरस्वामी की कैसे लेते हैं, अव्वलतो यह बतावें आप के माने हुवे ३२ सूत्र में श्री मन्दर-स्वामी का नाम किस सूत्र में है दूसरा महा विदे के साधू का

कल्प ही अलग है प्रतिक्रमण का भी नेम नहीं पाप लागे तो करे तीसरा वे भगवान् किरोडों कोस पर विराजते हैं उनकी काया का स्पर्श कैसे करते हैं।

(पूर्वपक्ष) भगवान् तो दूर विराजे हैं परन्तु हम ईशान खूण में भगवान् का आरोप कर वंदना कर लेते हैं।

(उत्तरपक्ष) लो आखिरतो रस्ते पर आनाही पडा जब प्रैक्ष में आरोप (थापना) मानते हो जिसीसे तो प्रत्यक्ष में ही माननी ठीक है जिस से भगवान् की आज्ञा और आप का नेम दोनों रह जावे अस्तु।

पाठको ! ठाणांग ठांणा १० तथा समवायंग दोनो सूत्र में स्थापनाचार्य का लेख था सो हमने बता दिया हैं और आवश्यक सूत्र में प्रतिक्रमण विधि में भी स्थापनाचार्य कहा है ४ ज्ञान १४ पूर्वधारी श्री भद्रबाहु स्वामी स्थापना कुलक में थापनाचार्य का विधि का प्रतिपादन अच्छी तरह से किया है वो कुलक भी मौजूद है अस्तु।

आगे जंघाचरण मुनि जिन प्रतिमा वंदणे को जावे जिस का सूत्र अर्थ हम लिख आये हैं उस पर (ए-पी) गालियों

का दि मजा उडाया है और मुझे अभव श्रेणी मे दर्जे किया है इत्यादि ।

पाठको ! जरा शास्त्रका प्रमाण देके गालिया देता तो वाचक वर्ग को कुछ संतोष होता विचारे भव्य अभव्य का निर्णय केवल भगवान् सिवाय कोई नही कर सकते हैं ये वात जैन सिद्धान्त में प्रसिद्ध है सायत् आप और आप के गुरूजी गौशाल जमाली वत् केवली वणगये होतो जैसा उनका दरजा वैसा ही आप का समझा जावेगा सायत् (जैनशासन) अखवार का (स्वप्न) का लेख पढके ही आपकी वदानी भडकी हो, वंघव कदाचित् (स्वप्न) सत्य हो जावे तो वो श्री केवली महाराज के मुखारविंद का फरमाया हुवा है खैर आप मुझे अभवी कहे परन्तु मैं तो सब जीवों को कहता हूं कि आप जिन शासन का रसिक होके अपनी आत्मा का कल्याण करे ॥ ५ ॥

शतक तीजो उदेसो पहेले। भगवती में सारजी।
चमरइन्द्र सरणालइजावे।अरिहंत विंब अणगारजी।
प्रतिमा ॥६॥

अर्थ—भगवती सूत्र शतक ३ उ० १ चमर इंद्र के अधिकार में तीन सरणा पाठ

यत्–णणत्थ अरहंतेवा अरहंतचेइयाणिवा अणगारेवा
भावियप्पाणो णीसाए उढं उप्पयइ जाव सो हमे कप्पे

भावार्थ–शकरेंद्र विचार करता हुआ चमरइंद्र अपनी शक्ति से सुधर्म कल्प, देव लोक, में नहीं आ सके सूत्र अर्थ इतना अवश्य है कि अरिहंत १ अरिहंतोकी प्रतिमा २ अणगार भावित् आत्मा का धणी की, ने श्राय, (सरणो) से उर्द्धलोक में आ सकता है ।

ए तीनो सरणो में हरएक सरणा लेके चमरइंद्र उर्द्धलोक में जा सकता है परन्तु ए नहीं समजना की एक सरणा लेके जावे तो बाकी २ सरणा निष्फल है ।

तीन सरणो में से चमरइंद्र अरिहंत वीर प्रभु का सरणा ले गया है और जीन प्रतिमा तथा अणगार का सरणा ले के जा सकते हैं

जैसा अरिहंतो का प्रभाव और असातना है तैसे ही जिन प्रतिमा का प्रभाव और असातना है इसी से ही ३ सरणा की असातना २ ही कही है पाठः श० ३३१

यत्–महादुक्खंखलु तहारूवाणं अरहंताणं
भगवंताणं अणगाराणय अच्चासायणयाए अर्थ सुगम्

इसी का मतलब जो अरिहंतोकी असातना है जैसे मेरू आदि की मूर्ति कुपुट देने में मेरु की अशातना होती है कारण उस मूर्ति में मेरु का आरोप है वैसा ही भगवती स० १० उ. ५ देवता डाढा की असातना टाले ऐसा पाठ है और डाढा की भक्ती करते हैं अशातना पाप है भक्ती धर्म है और देखो दशवी कालीक अ० ९ उ० २ गाथा

संघट्टइत्ताकाएणं, तहाउवहिणामवि ।
खमेहअवराहमे, वइज्जानपुणोत्तिए ॥ १८ ॥

भावार्थ—गुरु को उपाधि की पग आदि से असातना हो जावे तो गुरू को ही खमावे उपाधि अजीव है तो पिण गुरू महाराज के नाम से ही इस रीति से जिन प्रतिमा समझ लेना (प्र-वी) चमरइन्द्र महावीर स्वामी का सरणा लेके गया का पाठ लिखा है इस विषय में हम उपर लिख आये आगे ४ सरणा में मूर्ति किस सरणा में है ऐसा विकल्प किया है बंधव अरिहतो की मूर्ति अरिहंतों का सरणे में है और सिद्धों की मूर्ती सिद्धों का सरणे में है इसी का समाधान ऊपर कर आये हैं (प्रश्न)फेर तीन सरणो में जुदा २ क्यु कहा—(उत्तर) किसी काल क्षेत्र से तीर्थंकरो का जोग न हो तो प्रतिमा या साधू के सरणे से जा

अनेक साधू सामायक आदि ११ अंग १४ पूर्व भणीया हैं परन्तु ५-११-१४ चैत्य नहीं किया और ज्ञान तो एक वचन है और चैइयं बहु वचन है प्रिय ज्ञान तो अरूपी है तो क्या उक्त द्वीप में ज्ञान का ढिगला पडा है ज्ञान को वंदते तो वह द्वीप में जाने की क्या जरूरत थी। आगे मुनि अपने स्थान नगर में आके असास्वती प्रतिमा वंदी है वो क्या अर्थ करोगे प्रियः भाव ज्ञांनतो अरूपी है और स्थापना ज्ञान कहोगे तो प्रतिमा कहने में क्यों शरमाते हो हमारे स्थानकवासी भाई पिण (चैत्य) का अर्थ मन्दिर प्रतिमा करते हैं।

(१) प्रश्न व्याकरण आश्वद्वार १ (चैत्य) अर्थ प्रतिमा उक्त सूत्र अ० ५ उक्त सूत्र अ० १० ॥

(२) उववाई पूर्णभद्र (चैत्य अर्थ) मन्दिर प्रतिमा ।

(३) व्यवहार सूत्र चूल का (चैत्य) अर्थ प्रतिमा ।

(४) ज्ञाता भगवती आदिमें पदोके अधिकार (चैत्य) अर्थ प्रतिमा ।

सो क्या जिन प्रतिमा के द्वेष वास्ते ही चैत्य का अर्थ ज्ञान करतेहो आगे सुनो चैत्य का अर्थ सूत्र में खुलासा प्रतिमा किया है ठा० ३ उ० ।

जीव सुभ दीर्घ आयु तीन कारण से बांधते हैं पाठ- देवीयं चेइई उववाइ भगवान को वंदने के अधिकार में पाठः देवयं चेइय भगवती आदि में ऐसा पाठ बहुत है इसका अर्थ देवता का चैत्य (प्रतिमा) तीपरे आप की सेवा भक्ती करू (टीका दैवत देवं चैत्य इष्ट देव प्रतिमा) आगे बडे हैं नाम से ही नहीं इत्यादि इसीसे मालूम होता है कि ये लोग (नय) निक्षेपे के ज्ञान से शून्य है जो कि (नय) का ज्ञान होता तो ऐसी कुयुक्तिया कदापि न करते वाक्य यह वचन सगृ नय का है इस मे सम्पूर्ण चैत्य वदन आ जाते हैं उववाइ में एक वचन है ठाणग सूत्र (ए गे आया) देखो आचाराग सूत्र में तीर्थ यात्रा कही है गोतम स्वामिने अष्टापद की यात्रा करी है तो फिर शका ही किस बात की जैसा शास्त्र में वैसा प्रतिमा छत्तीसी में है इत्यादि सूत्रार्थ से सिद्ध हुवा चारण मुनि ने शास्वती प्रतिमा वंदी है इति ॥

सतीद्रोपदी प्रतिमा पुजी । ज्ञाता सूत्र मंजार जी । आणंदश्रावक अङ्गसातमें । सूण तेहनु अधिका-रजी प्र० ॥८॥

अर्थ-सूत्र ज्ञाताजी अध्येन १६ पाठ

पत्-तएणंसा दोवइ रायवर कन्ना जेणवे मज्जणघरेतेणे-
वउवा गच्छइ मज्जणघर मण्डप्पविसइ एह्राया कय-
वलि कम्मा कयकोउय मङ्गलपायाच्छित्ता सुद्धपावेसाइं
वत्थाइं परिहियाइं मज्जणघराओ पडिणिखमइ जेणेव
जिनघरेतेणेव उवागच्छइ २जिनघरं एणुपाविसइ पविस-
इत्ता आलोए जिण पडिमार्ण पणामंकरेइ लोमहदत्थयं
परामुसइ एवजहासुरियाभीनो जिणपडिमाओ अच्चेइ तहेव
भाणियव्वं जावधुवं डहइधुवं डहइत्ता वामंजाएडं अंचेइ
अंचेइत्ता दाहिणजाएड धरणीतलांसि निहट्टुत्तिरकुत्ता
मुद्धाणं धरणी तलांसि निवेसेइ निवेसेइत्ता ईसिपच्चुण-
मइ करयल जावति कट्टु एवंवयासी नमोथुणं अरिहं-
ताणं भगवंत्तणं सम्पत्तेणं वन्दइ नमंसइ जिन घराओ
पडिणिरकमइ

अर्थ-तवं सो द्रोपदी राजवर कन्या जहां स्नान् मज्जन् करने का घर (मकान) तहां आवे मज्जन घर में प्रवेश करे स्नान करके किया है वलिकर्म पूजाकार्य अर्थात् घर देहरे में पूजा करके कौतुक तिलकादि मंगल, दधि, दूर्वा,, अक्षत्तादि से ही प्रायश्चित दुःस्वप्नादिके घातक किये हैं जिसने शुद्ध उज्ज्वल

बडे जिनमंदिर में जाने योग्य ऐसे वस्त्र पहर के मज्जन घरमेंसे निकले जहा जिनघर है वहा आवे जिनघर में प्रवेश करके देखते ही जिन प्रतिमाको प्रणाम करे पीछे मोरपीछी लेकर जैसा सूर्याभ देवता जिन प्रतिमाको सतरा प्रकार पूजे तैसे सर्वविधि जानना सो सूर्याभका अधिकार यावत् धूप देने तक कहना पीछे धूप देके वामाजानु (डाबागोडा) ऊचा रखे जिमणा जानु (सज्जा गोडा) धरती पर स्थापन करके तीन वेर मस्तक पृथ्वी पर स्थापे स्थापके थोडासा नीचे झुकके हाथ जोडके दशों नखों को मिलाके मस्तक पर अजली करके ऐसे कहै नमस्कार होवे अरिहत भगवन् प्रति यावत् सिद्धिगति को प्राप्त हुए हैं यहा जावत् शब्द से संपूर्ण शक्रस्तव कहना पीछे वादना नमस्कार करके जिन घर से निकले।

प्रिय बात जग जाहिर है कि द्रौपदी माहासती जिन प्रतिमा पूजी और नमो थूण किया है।

यद्यपि (ए० पी०) कदाग्रह के वस होके भद्रक जीवों को बहकाने के लिये कुयुक्तिया करी हैं परन्तु किसी सेठसे एक लापर आदमी कहा मैंने तो आपको मर गया सुना था सेठ ने कहा मैं तो जिंदा बैठा हूं लापर ने कहा मुझे भला आदमी

कहा था अस्तु विचारो लापर का कहना सत्य है, या सेठ प्रत्यक्ष बैठा वो सत्य है। मतलब हम ऊपर लिख आये है वीतराग गणधर का वचन सत्य है कि (ए० पी०) स्वकपोल कल्पित गपोडा सत्य है पाठक स्वयं विचार लेवें।

आगे लिखा हैं कि विधिवाद में पता नहीं मिले तब चरितानुवाद की साक्षी देते हो इत्यादि।

प्रिय अव्वल तो आप किसी जैन मुनिकी भक्तिकर विधिवाद चरितानुवाद को समझो विधिवाद चरितानुवाद किसे कहते हैं।

देखो मेघकुमार थावच्चापुत्र आदि की दीक्षा महोत्सव सूत्र में चली है आप उसको क्या कहोगे जो विधिवाद कहोगे तो आपके मत का जड मूल से निकंदन होजायगा या चरितानुवाद कहोगे तो द्रोपदी जी की पूजा की तरह उनका संयम भी चरितानुवाद में कहना पडेगा। अब किस बिल में घुसोगे।

देवानुप्रिय तात्पर्य यह है कि गणधर भगवान सम्बन्ध, पर कथन फरमाते है जिसमें विधिवाद का कथन विधिवाद में समजना और चरितानुवाद का कथन चरितानुवाद में समजना जैसे मेघ कुमार का जन्म से दीक्षा तक विधिवाद में श्रावक प्रतिमा पूजी सो सुनो।

[१] भगवती स० २ उ० ५ तुगीया नगरीके श्रावक
पा० यत्=[एहायाकयवलिकम्मा]

टीकार्थ—स्नानान्तरंकृतबलिकर्मैस्वगृहदेवतानां ते तया । मतलब प्रतिमा पुजी

टब्बार्थ—एहाया स्नान किधी कयबलिकम्मा आपणा घरना देवताने किधा बलिकर्म अर्थात् प्रतिमा पूजा करी ।

[पूर्वपक्ष] उक्त श्रावकों ने कुल देवी की पूजा करी है

(उत्तर पक्ष) प्रिय वे भगवान के श्रावक आप सरीखे नहीं थे सो भैरव भवानी, चन्डी माता आदि को पूजते फिरे उक्त श्रावक ने तो व्रत लेते ही अन्य देवों का त्याग किया है पाठ ।

नोखलुमेभंते कप्पइ अज्जप्पभिइचण अन्नउत्थियावा अन्नउत्थियदेवयाणिवाइत्यादि

इस पर गणधर भगवान ने मोहर छाप लगादी है सो भी सुन लीजीये ।

(असहेजदेवा सुरनाग सुवृण जरक रक्कसकिणर (किंपुरस)

अर्थ—श्रावक कोइ देवता का साज नहीं वछय ने वादे न

पूजे इतने पर भी कुल देवी पूजने का भ्रम दूर न हुवा हो तो और सुन लीजिये श्रीज्ञाता सूत्र अ० ८ श्रीमल्लीनाथ जी ने भी जिन प्रतिमा पूजीका पाठ।

(एहायाकयबलिकम्मा) सिद्ध हूआ।

(२) भगवती स०७उ०९ वर्णनागनतुवेजीने प्रतिमा पूजी।

(३) भगवती स०११उ०१२ आलंभिया नगरिका इसी भद्र पुत्र आदि बहुत श्रावकों ने जिन प्रतिमा पूजी।

(४)भ० स०१२-१ संख पोखली आदि जिन प्रतिमापूजी

(५) भ० स० १२-२ जैवंती, मृगावती, उदाई राजा ने प्रतिमा पूजी और भी उदाइराजा मंडुक श्रावक कार्तिक सेठ आदि का अधिकार है।

(६)ज्ञाता अ० ५ थावचा पुत्र आदि २५०० सो मुनि श्री शत्रुञ्जय पधारे हैं।

(७) ज्ञाता अ० ८ श्रीमल्लीनाथ प्रभु प्रतिमा पूजी और आचारंगादि ५ सूत्र तो लिख आये हैं २६ सूत्र अगाडी लिखूंगा सो देख लेना आगे (२) प्रश्न किये हैं [१] क्या तुम्हारे मूर्ति पूजकों की कन्याएं पांच ५ पति कर सकती हैं।

[२] प्रश्न क्या तुम्हारे मूर्ति पूजने वालों के विवाहोंमें म-

दिरा मास पकाकर अपने सम्बन्धियों को खिलाया जाता है जो कि द्रौपदी के विवाह में उन दोनों कार्य हुए है।

(उत्तर) मित्र द्रोपदीजी के लग्न समय कृष्ण वासुदेव आदि बडे २ राजा आयेथे। इनकी साक्षीसे महासती द्रोपदी जी ने पूर्व नीयाणेके प्रभाव से ५ पति वरे थे जिसको श्री कृष्ण वासुदेवने भी कहा है [सुवरिय] या ने भलावरिया अब भी आपको कुछ भ्रम हो तो सुनो वीर भगवानने मुखार-विंदसे कहा है कि चेलना महासती है इनको तो आपही मानते हो जब चेलना जी को दोहला के समय अभय कुमार ने किस का आहार कराया था वो निरयावल का सूत्र मे खुलासा है वो कारण से किया हुआ कार्य अब भी आप कर सकते हैं।

[पूर्वपक्ष] अजी हम ऐसा कार्य किस वास्ते करे चेले महासती के तो पूर्व भव का सम्बन्ध था।

[उतर] प्रिय मित्र यही आपके प्रश्न का उत्तर है जैसे चेलणा महासती पूर्व सम्बन्ध से अनुचित आहार किया वैसे ही द्रोपदी महासती ने पाच पति वरिया।

[प्रश्न २] उत्तर पाठको ऐसे अनार्य वचन लिखते इन की कलम के सींचली होगा खैर उत्तर सुनो जैन सिद्धान्त में

मदिरा मांस का आहार न तो द्रोपदी जी ने किया है न उन के सम्बन्धी कृष्ण वासुदेव पांडव आदि ने किया है न कोई जैनी करते हैं।

आगे ६ प्रकार के आहार का पाठ लिख के कहा है उस वक्त द्रोपदी को समकित नहीं थी इत्यादि।

[उत्तर] ६ प्रकार के आहार का कारण यह है कि उस वक्त कोई समकिती कोई मिथ्याती राजा आये थे उन्हीं की राजनीति[1] के अनुसार प्रबंध किया था इस में द्रोपदी महासतीको मिथ्यात का कलंक देना प्रियः यह बात कितनी भूल की है।

(पूर्वपक्ष) द्रोपदी को समकित् होती तो उन के घर में ६ प्रकार के आहार किस वास्ते होते।

(उत्तरपक्ष) यदि घर में आहार होने से ही मिथ्याती कहते हैं तो सुन लीजिये।

(१) सूत्र उपाशकदशा अ० ८ महाशतक श्रावक के घर में ६ प्रकार का आहार होता था और महाशतक की स्त्री (रेवती) ६ प्रकार का आहार करती थी इस में महाशतक श्रावक का श्रावकपना मानते हो या नहीं।

---

१ जैसा मजमान वैसी सरबरा.

(२) सूत्र उत्राध्येन अ० २२ उग्रसेन राजा की पुत्री राजमति के विवाह के अंदर हजारों जानवर इकट्ठे किये थे। श्रीनेमनाथ प्रभु आदि जान (बरात) लेके पधारे थे अब फरमाये राजमति जी के समकित् में कुछ शका है देवी राजमति जी के वास्ते गणधर भगवान् ने फरमाया है (सजताए सुभासिय-) राजमती जी को सजति कहा है।

लो राजमती को तो आप भी मानते हैं क्या उनी की तरह आप भी विवाह में जानवर इकट्ठे करते हैं तब आप को कहना ही पड़ेगा कि उग्रसेन राजा तो समकिती था परन्तु विवाह मे आते हुए कितने ही राजा उनके साथ में मिथ्याती थे इस वास्ते जानवर इकट्ठे किये थे।

बधु [1] राजमती जी और द्रौपदी जी दोनों समकित् में अव्वल मानी गई हैं।

प्रिय [1] जरा तो प्रभव का डर रखना था द्रौपदी जी के घर में जिन मंदिर और भगवान की पूजा करने वाली को मिथ्या-त्वणी कहना कितना अहित का कारण है आगे लिखा है कि द्रौपदी जी ने मूर्ति पुजी वो अरिहत की नहीं थी कामदेव की थी इत्यादि।

---

१ उग्रसेन राजा व जेठमल ढुंढकने भी सम्यक्ती लिखा है

अहो कर्म गत मुझे आश्चर्य उत्पन्न होता है कि इस हठ-ग्रही जीव को केवली महाराज भी शायद ही समझा सकें भोले भाई सूत्र में (जिनपडिमा) कही है जिस को आप कामदेव (ईलाजी) कहते हैं तो (कामदेव पडिमा) ऐसा कोई सूत्र का पाठ तो लिखना था दूसरा नमोथूणं अरिहंताणं भगवंताणं इत्यादि नमोथूणं का गुण कामदेव में है कि अरिहंतों में है मुझे आप की अनुकंपा आती है आप किस हठग्रही के फंदे में फंस गये क्या आप तीन णं तारियाणं कामदेव को ही समझते हैं। अस्तु--

सत्यार्थ चन्द्रोदय का उत्तर ढूंढक हृदयनैत्राञ्जन में देख लेना कितने लोग कहते हैं कि द्रोपदी ने पूर्व भव में नियाणा किया था इत्यादि उन का समाधान हमारी बनाई सिद्ध प्रतिमा मुक्तावलि में हमने अच्छी तरह से खुलासा कर दिया है जिस में यह नहीं लिखा है अस्तु आनन्द श्रावक का अधिकार सातवां अंग उपाशक दशा सूत्र में है सो आगे सुनो ॥८॥

अन्यतीर्थी ने उणरी प्रतिमा, 'नहि वंदुं जावत् जीवजी'
स्वतिर्थीरी प्रतिमा वंदु ज्यांरीसेंट्ठेसमकीतनीवजी प्रतिमा॥९॥

अर्थ—सुगम सूत्राक्षर सूत्र उपाशक दशा अ० १ मूल पाठ

नोखलु में भंते कप्पइ अजप्पभिइंचणं अन्नउथ्यियवा अन्नउ थियदेवयाणिवा अन्नउथ्यिय परिगाहियाई अरिहंतचेइया इवा वंदितावा नमसित्ताएवा

१ (टीका) नोखलु इत्यादि नोखलु मम भदंत भगवन् कल्पते युज्यते अद्यप्रभृति इतः सम्यक्त प्रतिदिनादास्य निरतिचार सम्यक्त परिपालनार्थं तत्त तनामाश्रित्य अन्त उत्थिएति जैनयथाद्यदन्यतयुथ सघान्तर मित्यर्थस्तदस्ति येषां ते अन्ययूथिकाचरकादिकुतीर्थिकास्तान् अन्य यूथिकं दैवतानि बाहरि हरादिनी २ अन्ययुथिक् परिगृहितानिवाअर्हचैत्यानि अर्हत प्रतिमालक्षणानियथाभौतपरिगृहीतानिवीरभद्रमहाकालादि निवंदितु अभि वादनं कर्तुं नमस्यतुंवा प्रणामपूर्वक प्रसस्तध्वनिभिर्गुणोक्ती तेनं कर्तु ततानां मिथ्यात्वस्थीरि करणादि दोष प्रसङ्गादित्यभिप्राय ॥

२ अर्थ—हे भगवन् ! मुझको न कल्पै क्या न कल्पै सो कहते हैं आज से लेके अन्यतिर्थी चरकादि अन्यातिर्थी के देवहरि हरादिक और अन्य तिर्थी के ग्रहण किये अरिहत के चैत्य जिन प्रतिमा इनकी वदना करना नमस्कार करना।

इस विषय में (ए पी) खूब धूर्तता से चालाकी करी है

अन्य मत की श्रद्धा छोडके भगवान् के तास दीक्षा लेने से भगवान् का ही साधू कहलाया था आप के कहनेसे तो [**अरिहंत परिग्गाहियाा अन्नउत्थीया चेइयाणीवा**] होना चाहिये परन्तु ऐसा पाठ गणधर महाराजने नहीं फरमाया सिद्ध हुआ तीसरे पाठ में चैत्यशब्द का अर्थ प्रतिमा है।

(पूर्वपक्ष) सूत्र में ऐसा पाठ तो नहीं कि आनन्द प्रतिमा वंदनी राखी आप ऐसे किस आधार से कहते हैं।

(उत्तरपक्ष) प्रिय ! सूत्र तो खुलासा पुकार रहा है परन्तु आपकी अज्ञान दशा से आप को मालूम नहीं पडे तो अज्ञान चश्में को उतार के देखो आनन्द श्रावक भगवान के साधू को वन्दना करना किस पाठ में रखा है सो बतलादो।

(पूर्वपक्ष) अजी पहले पाठ में अन्य तीर्थी को नहीं वंदे तो स्वःतीर्थी को वन्दना आपसे ही सिद्ध होगया जैसे झूठ बोलने का त्याग करने से सत्य बोलना आपसे ही रह गया ऐसे अनेक दृष्टान्त हैं।

(उत्तर०) प्रिय ! बोलना तो न्याय चालना अन्याय यह किसने सिखाया जब पहले पाठ से साधू वंदना सिद्ध किया तो दूसरे पाठ में अन्यतीर्थी का देव हरीहलद्दर की मूर्ति नहीं वंदे तय

अरिहंतो की मूर्ति वदनी आपके कहने से सिद्ध होगई फिर सिर-पची किस बात की।

(पूर्वपक्ष) हम पुजा पाठ मे मूर्ति का अर्थ नहीं करेगे राग्व द्वेषहलधर का अर्थ करेंगे।

(उत्तर पक्ष) प्रिय ! आप का किया अर्थ कोई विद्वान् प्रमाणिक नहीं गिनेगा प्रमाणिक अर्थ येही है कि जो पूर्व आचार्य कर गये हैं हम आप से इतना ही पूछते हैं कि आनन्द श्रावक ने अन्य तीर्थियों का भाव निक्षेपा वन्दना छोडा है कि ४ निक्षेपा वन्दना छोडा है (त्याग किया है)।

(पूर्व०) आनन्द श्रावक ने अन्य तीर्थियों का ४ निक्षेपा वंदना त्याग किया है।

(उ०) तो से तीर्थियों का ४ निक्षेपा वंदना आप से ही सिद्ध हो गया।

(पूर्व०) अरिहंतों की पतिमा दुजा पाठ में वदनीक है वो फिर तीसरा पाठ किस वास्ते है।

(उत्तर०) प्रिय जैसे बद्रीनाथजी में श्रीपार्श्वनाथजी की प्रतिमा जगन्नाथजी में श्री शांतिनाथजी की प्रतिमा अन्य तीर्थी

लोक अपना देव करके पूजते हैं जैसे ही जिन प्रतिमा अन्य तीर्थी ग्रहण करते हुये उस प्रतिमा को भगवान के श्रावक नहीं वंदे प्रिय ! जैसा सूत्र का अर्थ था वैसा मैंने आप को कह दिया है अब सत्यासत्य का निर्णय करना आप का फर्ज है।

(पूर्वपक्ष) भला साहब आज जिस की श्रद्धा मूर्ति पूजने की है वो समान श्रावक भी मन्दिर बना सकते हैं तो आनन्द श्रावक तो धनाढय था उन्हें को मन्दिर बनाने का आधिकार किसी सूत्र में है नहीं तो फिर कैसे मान लिया जावे आनन्द श्रावक प्रतिमा पूजी।

(उत्तर पक्ष) प्रिय ! आनन्द श्रावक का अधिकार उपाशंकदशासूत्र में है उस सूत्र के पद ११५२००० जिनकी श्लोक संख्या तो बहुत होती है उक्त शास्त्र में क्या २ बातें थीं उसकी नुद श्री समवायंग सूत्र में हैं सो सुनो पाठ।

सेकिंतं उवासगदसाउ उवासगदसाझणं उवासयाणंणगराइं उजाणाइं चेइयाइं वणसड रायाणो अम्मापियरो समीसरणाइं धम्मायरिया धम्मकहाउ।

अर्थ—सुगम इसमें (चेइयाइं) शब्द का अर्थ टीका का टे-

वाक्रा,(चैत्य यानें जिन मन्दिरका ही है शायद (चैत्य) का अर्थ वाग ज्ञान साधू करो तो वाग ज्ञान,साधू का पाठ अलग है इसी से (चैत्य) का अर्थ श्रावकों का जिन मन्दिर ही है शायद कोई तर्क करे कि उपाशक दशा में मदिर नहीं किया (समाधान) उपाशक दशा ११५२०८० पद वाली लावो हम वता सकते हैं क्या उपाशक दशा का कम ग्रन्थ रेहेना से समावायग सूत्र झूठा बताते हैं प्रिय आनद श्रावक के जमाने को करीब २५०० वर्ष हुए हैं परन्तु जिन मन्दिर तो हजारों वर्षों के मौजूद दृष्टि-गोचर होते हैं इतना ही नहीं वल्कि अंग्रेज विद्वानों ने भी कहा है कि जैनो में मूर्तिपूजा सनातन से ही चली आती है आप को देखना हो तो भावनगर की छपी हुई मूर्तिमडन प्रश्नोत्तर देख लेना. सिद्ध हुआ कि सूत्र में तो प्रमाण आनन्दादि श्रावकों का जिन मदिर है और श्रावक जिन प्रतिमा वदे पूजे देखो हमारी प्रतिमा सिखर वद मदिर में विराजे है इसी में शंका करना ही समकित का भंग है आत्मार्थी सज्जनों को सूत्र का वाचना परिपूर्ण आस्था रखना चाहिये जब ही समकित की नीव और कार्य आनद श्रावकों की तरे सिद्ध होगा अस्तु ॥

अंतगडने अणुतरोवाई । प्रथमउपाग रिसाखजी ।
अरिहतचैत्यनगरिया सोभे । श्रीजिनमुखसेभाषजी मति॥१०॥

अर्थ—उक्त दोनों सूत्र में चंपा नगरी के अधिकार में उववाई सूत्र की भोलावण है जिस में मूल पाठ का वर्णन चला है जिस का खंडन करने में (ए० पि०) की कोई कुयुक्ति न मिली तब कह दिया कि उववाई में पूर्णभद्र यक्ष का मंदिर है तथा श्री आत्मारामजी ने लिखा वो पाठ प्रक्षेप है । सात प्रतियां मेरे पास प्राचीन में यह पाठ नहीं है इत्यादि बाकी गालियां. पाठको ढूंका मत को ही करीब ४४० वर्ष हुए तो इन से प्राचीन की तो आशा ही क्या मैंने स्थानक वासियों की २०–२५ उववाई सूत्र की पङ्कतीया देखी हैं जिस में उक्त पाठ है और जैन भंडारों से तो ताड पत्र पे लिखी हुई पंडित भी देखी जिस में उक्त पाठ है तो 'ए. पि.' क्या भोले जीवों को मूल में डालने के लिए धोखाबाजी कररहा है जो उक्त पाठ 'पाठांतर' देख के ही चमक गया हो तो उसका मतलब सुनलो जैन सिद्धान्त पुर्वधारी आचार्य ने पुस्तकारोड मथुरा और बलियापुर इन दो स्थलों में किया था ये बात जैन जैनांतर में प्रसिद्ध है जिस में दोनों आचार्योंके लिखे हुए पाठ का भावार्थ प्रिय यही है सो पाठ देखो।

मूल	मूल
[रात् आयारवतचेइया]	[बहुलाआरहतचेइया] जणवयसणिविठ बहुला इतिपावान्तर)
टीका श्री अभयदेवसुरीकृत चैत्यानि देवतायतनानि इत्यादि— नोट—स्यत् यक्षादिका मन्दिर केइ देवे तो यक्षका मीन्दरका पाठ अगाडी अलग है	टीका श्रीअभयदेवश्वरी कृत बहुला नीयस्यां मांतथा १ अरिहंतचेइयजणवय विमणी त्रिदबहुलेतिपाठान्तरं तत्रार्हचेत्यानां जनानां दतिनाश्च त्रिविधानियानी पाठकास्तैर्बहलेति विग्रहः सूर्यागचित्तचेइय जूपसणिविठबहुला इतिच पाठान्तरं २ ।
टब्बा लूका गच्छ श्री अमृतचन्द्र सूरिकृत छइ जिणनगरीइआकारवत सुन्दराकार चैत्यप्रसाद देहराछइ ।	टबार्थ लूकागछ श्रीअमृतचन्द्रसूरी कृत बहुला कहिता घणाजिर्णी नगरीये अरिहतना चैत्यप्रसाद देहराघणाछे जिहा एहवो पाठान्तरछे ।

देखिये पूर्वधारी आचार्य ने तो दोनों पाठ प्रमाण किये हैं उस पर आप के वडों ने टव्वा किया है क्या उन्हीं का वचन उथापने को ही आपने अवतार धारण किया है प्रिय उक्त पाठको प्रक्षेप कह देवोगे तो पिण दूसरे पाठ से ही मंदिर तो सिद्ध हो गया फिर कुयुक्ति कर संसार वृद्धि करना क्या बुद्धिमानों का काम है शायद तुम्हारे सरीखे मती के अंधे कहदेवें कि ये मंदिर जक्ष का होगा प्रिय गणधर भगवान् ने जक्ष का मंदिर अलग फरमाया है ।

तिसेणंचंपाए णयरिएवहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए पुणभद्दणामं चेइए होत्था चिराइए ।

अब आंख मींच के सोचो आप की कलइ उडने में कुछ कसर रही है ! प्रिय इस समय में विद्वान् सूत्र देख के निर्णय करने वालों की संख्या दिन पर दि । वढती जा रही है इतना ही नहीं वल्कि अंग्रेज लोग भी जान गये हैं जैसे डाक्टर हरमन जैकोबी जैनाचार्य श्री विजयधर्मसूरी के समागम जोधपुर में होने से उन्होंने भी निश्चय कर लिया कि जैनियों में मूर्ति पूजा सनातन है आगे वैष्णव धर्म को मूर्ख बना के समाजी तथा कबीरपंथी दादूपन्थी का नाम लिखा है ।

पाठको [ए. पि.] मूर्ति विषय में आप के साधर्मी भाइयों का नाम लिखा जैसे तो हमारे जैन धर्म में भी कितने ही आगम उथापी मूर्ति नहीं मानते हैं जैसे बाइसपंथी, तेरापंथी, अजीवपंथी, गुलाबपंथी, आटकोटी पथी और भी आज कल इन लोगों को बहुत विशेषण दिया हुआ है परन्तु मैं अपनी कलम से लिखना नहीं चाहता हू मूर्ति पूजा विषय पीछे लिख आये हैं और भी सुन लीजिये ।

उक्त दोनों सूत्रों में अनेक मुनि शत्रुंजय आदि परवत (तीर्थ) पर पधार के संथारा किया है यह निमित्त कारण आप को भी अवश्य मानना ही पडेगा ।

(१) अन्त गड सूत्र वर्ग ३ अ० ८ सुलसा गाथा पतणी हिरणगमेषी देवकी प्रतिमा पूजने से देवों की ही आराधना हुई है जैसे ही जिन प्रतिमा पूजने से जिनेन्द्र देवों की आराधना होती है ।

(पूर्वपक्ष) अजी उन्होंने तो लौकिक खाते पूजी है ।

(उत्तरपक्ष) प्रिय लौकिक देव की मूर्ति लौकिक खाते पूज के अपना कार्य सिद्ध कर लिया तो लोकोत्तर कार्य सिद्ध क्यों नहीं होवे अवश्य अपितु अवश्य होवे ।

(२) वर्ग ६ आ ३ सुदरसन सेठ श्रावकने प्रतिमा पूजी है। (पहाय कय वलिकम्मा) यह गणधरों का वचन है अस्तु १०॥ प्रश्न व्याकरण पहिले संवर 'पूजा अहिंसानामजी। प्रतिमा वयावच्चत्रीजेसंवर करेमुनि गुणधामजी। प्रतिमा ॥ ११ ॥

अर्थ—सूत्र प्रश्न व्याकरण अ० ६ मूल सूत्र (पूया ५७) टीका (भावतों देव पूजा आयतनं गुणानामाश्रयः) टब्बार्थ भावथ की देवने पूजवो ते दया ॥ ५७ ॥ भावार्थ अहिंसा याने दया के ६०-नाम हैं जिनमें ५७ वां नाम देव पूजा है उक्त सूत्र अ० ८ में साधु प्रतिमा की वयावच्च करे है मूल पाठ।

केरीसए पुणाइआराहएवयमिणंजेसउवहिं भत्तपाणसंगहणंदाणकूसले अच्चंतबाल दुच्छलगिलाण वुड्डमा सखपणे पवत्तीआयरिय उवज्झाए सेहसाहम्मिएतवस्सी कुलगणसंघचेइयठेय निज्जरठिवेयावच्च अणिसियंद सविययहुविहंकरेइ।

अर्थ—शिष्य पूछता है "हे भगवन्! कैसा साधू तीसरा व्रत आराधे गुरु कहते हैं। जो साधु वस्त्र तथा भातपांणी यथोक्तविधि से लेना और यथोक्तविधि से आचार्यादि को देना तिन में कुशल होवे सो साधु तीसरा व्रत आराधे अत्यंत बाल (१) शक्तिहीन (२) रोगी (३) वृद्ध (४) मास क्षम-

णादि करने वाला (५) प्रवर्त्तक (६) आचार्य (७) उपाध्याय (८) नयादीक्षित शिष्य (९) साधर्मिक (१०) तपस्वी (११) कुलचान्द्रादिक (१२) गण कुल का समुदाय कौटीकादिक (१३) संघकुलगण का समुदाय चतुर्विध संघ (१४) और चैत्य जिन प्रतिमा इनको जो अर्थ तिन में निर्जरा का अर्थी साधु कर्मक्षय वाचता हुवा यश मानादिक की अपेक्षा बिना दस प्रकार से तथा बहुविधि से वैयावच्च करै सो साधु तीसरा व्रत आराधे इसी में (चेइयट्ठे निज्जरात्थी) इसका अर्थ टीकाकार श्रीअभयसूरी (चैत्यानीजिनप्रतिमा एतासांयोर्थःप्रयोजनं सतथातत्रचानिर्जरार्थी कर्मक्षयकामःवैयाव्रत्यं

इस पर (ए. पी) ने प्रश्न व्याकरण के पाचवें अध्ययन का पाठ (चेइयाणिवणसंडे) उक्त सूत्र अध्ययन १० का पाठ (भवणतोरण चेइय देवकूल सभापवाइति) यह दोनों पाठ से (चैत्य) का अर्थ प्रतिमा किया है और तीजा संवरद्वार में [चैत्य] अर्थ ज्ञान किया है। वाचक वर्ग ! स्वय विचार लेवें कि इन्हीं लोगों की कितनी न्याय बुद्धि है। क्या जिनेन्द्र देवों की प्रतिमा की निन्दा करने को ही [चैत्य] शब्द का अर्थ प्रतिमा करते हो और प्रतिमा का अधिकार ज्ञान साधु करते हैं तो जैसे चोर कोतवालको दंड दे ? वाह कलयुग तेरी लीला।

प्रिय लोक ! कहते हैं कि इन लोगों के पांच ज्ञानावर्णी तीन दर्शन मोहनी यह आठ पाटा द्रवतो मूः बन्धा है और और भाव आंख (चक्षु) पर बन्धा है परन्तु (ए. पी.) को इतने से सन्तोष नहीं हुवा तब प्रश्न० अ० १० का पाठ अनुसार एक पाठ [चक्षु] पर बन्धाने की उद्घोषणा करी है उक्त पाठ में तो घरहठ तोरण दरवाजा आदि बहुत वस्तु देखने को मना है यदि जब [स्थानकवासी] खुली आंखों फिरेंगे तो उक्त वस्तु दीख पडेगी इसी से एक पट्टी आंख पर बांधनेंकी अवश्य जरूरत है ।

(प्रश्न) क्यों जी आप उक्त दो पाढ में (चेईय) शब्द का क्या अर्थ करते हो ।

(उत्तर) प्रिय हमारे तो जो पूर्व आचार्य कर गये वही अर्थ है इन लोगों की तरह नया नया अर्थ नहीं करते हैं, लो सुनो उक्त सूत्र में ३ ठिकाने [चेईय] शब्द है उसका पूर्वाचार्यें नें [प्रतिमा] ही अर्थ किया है [१] चैत्य वृक्ष ।

[१] प्रश्न० अ० १ आश्रवद्वार में (चेईय) प्रतिमा है परन्तु वह प्रतिमा किसकी है कराने वाला कौन है जिसका अधिकार सुन प्रथम आश्रवद्वार है हिंसा जिसके भेद ५ हिंसा

(१) हिंसा का नाम (२) हिंसा करने का कारण [३] हिंसा करने वाला [४] हिंसा का फल [५ प्रथम हिंसा ।

१ पावोचंडो रुद्दो खुद्दो साहस्सिओ अणारिउ निग्घिणोनिस्संसो इत्यादि ॥

अर्थ—पापप्रकृतिनावन्यननोकारण चडरौद्रक्षुद्रः अणविमास्यौ प्रवृत्यौमलेच्छादि ना प्रवृत्यान्याथी अनार्य पापनीनिदारहित सुग्या रहित इत्यादि । क्या स्थानकवासी सब इसमे आ गये ।

२ हिंसा के तीस नाम पाणवह इत्यादि

[३ पाणवहस्स कलुसस्स कडुयाफल देसगाइं तंचवुणकरे तिकेइयावा असजया अविरया अणिहुय परिणामदुप्प ओगीपाण वहंभयंकरजहु विह वहुप्पगारं इत्यादि । त्रण वट आदि तीस नाम है ।

[३] वह वेत्तस्सा पागा इत्यादि अनार्य का कार्य घर-हाट खावि आदि कर साण कर्म सभा तोरण देवकुल पगलीया प्रतिमा स्थुल आदि वहुत विस्तर है नोट क्या श्री रुपभदेव प्रभु के निर्वण के याद ३ स्थुल इन्द्र महाराज ने कराई वो भी ईसी मे मानोगे

तीसरे अधिकार में जलचर, थलचर, खेचर, उजपुर, भुज-पुर, चोरेंद्री जाव इकेंद्री तक जीवों की हिंसा जीयकामत्थधम्म-हेउ काम विषय अर्थ धन्य धर्म टीका वेदार्थाथ वेदार्थमनु-ष्ठानां टवार्थ वेदार्थी अनुष्टानयवादिहोमे जीवो तव्यनेऽर्थे तथा आचार, इत्यादि हिंसा करने वालों को मंदबुद्धि कहा है क्या आपका स्थानक इस में आ गया।

४ हिंसा करने वाला क्वूरकम्मकारिइमेय बहवेमिल्ख-कुजाइ किंतेमकाजावणा संवर वछर गायमुरु दो इभडगभि-शिय पक्वणिया कुलरका गौडसिंहल पारस कोच अन्धद-विल चिल्लुल पुलिन्द आरोस इत्यादि।

अर्थ—क्रूरकर्म का करने वाला घणा म्लेच्छ देश जा पन्न-वणा सुत्र में अनार्य देशों का नाम कहा है कहां ते सक्व देशनां यवन देशनां संबर वच्छर कायमरुडां उद्दुभडग भित्तिक पक्वणिककुलाक्ष गौंडसिहल पारसक्रौंच अंधडाविड चिलकल पुलिंद्र आरोष इत्यादि।

५ तस्सय पावस्स फलविवागं आयाणमाणा वढंचि मह-ब्भयं अविस्मावेयणं दीदकाल बहुदुःखसंकडं नरय तिरिक्ख

णोणि इउ आवरकएच्चुया असुभ कम्म बहुला उववज्जंतिनर-
एसहुल्तिंमहालएसु इत्यादि

भावार्थ—पाप करने वाले को फल नर्क तिर्यंच का घोर दु:ख बताया है। इत्यादि।

प्रिय पाठको! उक्त पाच अधिकार सक्षेप से कहे हैं विशेष देखना हो तो सूत्र मेरे पास मौजूद है देख लेवें प्रिय अधिक खेद का विषय तो यह है कि उक्त पाच अधिकार अनार्य मिथ्याती के वास्ते हैं परन्तु हमारे स्थानक वासी भाई मूर्ति उथापने के लिये खुद ही उक्त पाट से शामिल हो गये हैं। मगर उन लोगों को यह ख्याल नहीं है कि श्री आचाराग सुत्र में भगवान् ने फरमाया है सम्मत् देशीनकरांतिपाव यह वचन हमेशा स्मरण रक्खो सम्यकूद्रष्टी ऐसा पाप कदापि न करें जो करे तो समकित रहे नहीं।

पूर्वपक्ष क्या समकित को पाप नहीं लगे देखो अधर्म द्वार में क्या हुवा घर हठ मन्दिर थानक आदि तो सम्यकूद्रष्टी पिण करते हैं।

उत्तर पक्ष प्रिये जैसा अधर्म द्वार में अनार्य मिथ्याति असुभ परिणाम माटी लेस्या पाप की सुजा रहित लोहीवरिया हाथ चीकणापाप करे है जैसा पाप सम्यकूद्रष्टी नहीं करे देखो

भ० म० पु० ९ वर्ण नागनतुवो चैडा राजा आदि संग्राम में पांच ही मनुष्य का वद्ध उन्हीं के हाथ से हुवा था परन्तु उनको श्रावक कायानतुमंदवुद्धि या नरकगामी तथा भगवती में मिथ्याती किरणों वेचेता तो५ क्रिया, वोहिज किरांणो सम्यक्द्रष्टि वीचतो ४ क्रिया लगे ! प्रिय समझने को इतना ही है कि जो रुद्रपरिणाम वाली अनंत वंदिचोकडी मिथ्याती के हैं जिस से वो पाप कर मनमें राजी हूये और उक्त चोकडी सम्यक्द्दष्टी के नहीं है जिससे लुंका परणामसे पाप करे तो पण पसच्या ताप करे जिससे सम्यक्द्दष्टी को अधर्म द्वार नहीं समजना ए सम्बद गृहवासका है और जीमीन्दर करणा है रीती केवल धर्मकाही कार्य है इसीसे (सम्मत्त दंशी न करंतिपावं) कहा है इतने पर भी कोइ मत कदाग्रही कहेगा कि नहीं हम तो हिंसा करनेवालों को अधर्म द्वार में ही समझेंगे उनसे हम एकही वोल पुछते है ।

[१] श्री मल्लीनाथ प्रभू ने अपनी मूर्ति कराइ उसीमें पृथिकायाकी हिंसा हुई और उसमें एक २ ग्रास हमेशा डालने से असंख्य जीवोंकी आहुति हुई ये काम भी ६ राजाओंको धर्म में प्रतिबोधने के वास्ते ही किया था अब आपके हिसावसे इन्ही परमेश्वरको किस द्वारमें गीनोगे आंख मीचके १० मिनट विचार

करो ऐसे २ अनेक वोल है इस विषयमे हमारी वनाइ सि० प्र० मु० देखो ।

[प्रश्न] अजी महात्माजी, ऐसा अर्थ न तो पेत्तर मैंने पढा है न मैंने किसीसे सुना मैंने तो यही सुना था कि मूर्ति मन्दिर अधर्म वली द्वारमे है परन्तु आज सूत्र सुनकर मेरा भ्रम दूर होगया है । अब इस वक्त आचारागमें जो ' जाई मरण मोयणाए ' इन शब्दों का अर्थ सुनना चाहता हु सो आप कृपा कर सुनावे ।

[उत्तर] अहो सत्यचन्द्र ! ऐसा अर्थ आगे नहीं सुननने का कारण यह कि अभी कितने ही लोक गाडर प्रभा है एक गाडर करे वे तो मत्र गाडर वें वें करने लग जाती है परन्तु उसके तात्पर्य समजने वाले तुम्हारे सरीखे बहुत कम है लोग जहां काम पडे तव 'चेइय' पाठ दिखाके कह देते है कि देखो भाई 'मन्दिर प्रतिमा' अधर्म द्वारमें है भोले भद्रिक जीव देखके भ्रम में पड जाते हैं परन्तु अव तो कितने ही लोग तुम्हारे जैसी खोज करने लग गये हैं ।

तुमने जो आचाराग सूत्र कहा सो ठीक हमारी वनाई सि० प्र० मु० पुस्तकमें विस्तार से लिखा हुआ है सो देख लेना और कितने ही लोग मूर्ति के द्वेप से कहते है कि जन्म मरणके

मिटानेको हिंसा करे तो बोधबीज का नाश होवे इसमें आचारांग का पाठ ' जाई मरण मोयणाए ' दिखाते हैं इसमें तुम को जो शंका हो तो इसीका अर्थ पूर्वाचार्यों ने किया वो मैं आपको सुना देता हुं ।

मूल सूत्र 'जाई मरण मोयणाए' इस पर श्री भद्रबाहु स्वामी कृत निर्युक्ति शीलांकाचार्य कृत टीका है श्रीजिनहंस सूरि कृत दीपकायत् जातीमरणमोचनार्थं कर्मादद्ते तत्र जात्यर्थं कार्तिकेयवंदनादिकाः क्रिया विधतेय कार्तिकेयं वंद्ते सउत्तमजातिं लभते तथा यान २ कामान् ब्राह्मणेभ्यो ददाति तांस्तान् अन्यजन्मानि लभते इत्यादि कुमार्गोपदेशान् हिंसादौ प्रभृति विदधाति तथा मरणार्थपितृपिंडदानादिषु अथवा ममानेन संबंधीव्यादितः तस्यवैरनिर्यातनार्थं मधवन्धादौ प्रवर्तते यादि वा मरणनिवृत्त्यर्थमात्मानो दुर्गाद्यपयाचित मजादिना बलिविधत्ते तथा मुत्यर्थं अज्ञाना वृतचेतसः पंचाग्नितपोनुष्टानादिषु प्राण्युंमपर्दकारिषु प्रवर्तमानाः कर्मादद्ते यादि वा जाति मरणयोर्मोचनाय हिंसादिका क्रियाकुर्व ।

देखो मिथ्याति जिन आज्ञा विपरीत गृतपिंड यज्ञ होम पंच अग्नि आदि क्रिया करे धर्म कहे उनको बोधबीज नहीं मिले परन्तु ऐसा नहीं कहा कि मन्दिर स्थानक करानेवाला ? बंधव इ-

तना तो विचार करना चाहिए जो जैनी भगवान की भक्ति करता ही बोधबीज का नाश हो जावे तो क्या भगवान को नहीं माने गालिया दे निन्दा करे वचन उत्थापे उनको समकित आवेगा अपि तु कभी नहीं ।

प्रिय सुगडाग या प्रश्न व्याकरणमें नारकी को परमाधामी पूर्व भव करी मिथ्यात् की किया उद्देशको मार देते हैं परन्तु ऐसा नहीं कहते कि तू ने पूर्वभव में जिन मन्दिर बनाया था या जिन प्रतिमा पूजी थी स्थानक कराया यहा कहने को बहुत हैं लेकिन ग्रन्थ बढ जानेसे नहीं लिखते । विद्वानोंके लिए इशारा भी असरकारी होता है ।

[प्रश्न] क्यो जी ऐसा अर्थ सूत्रमें हो तो फिर स्थानकवासी दूसरा अर्थ किस आधारसे करते है ।

[उत्तर] प्रिय आधार तो टीका का ही है परन्तु जहा जिन प्रतिमा का अधिकार आवे वहा मनमाने गपोडे लगा देते है जिस में भी सब टोले की एक मति नहीं है कहो आप किस का अर्थ सच मानोगे ।

(प्रश्न) हमको तो जो आप लिखावो पूर्वाचार्योंका ही अर्थ प्रमाण है अब आप आगे के तीन पाठों की कृपा करें ।

[२] उक्त सूत्र अ० ५ मूल पाठ 'चेइयाणियव-णसंडे' टीकार्थ–चेइयाणित्ति चेत्यवृक्षान आरामानिनां ट-ब्बार्थचैत्यवृक्ष मोटावन ।

[ए. पी.] ने लिखा है कि देवता के 'चैत्य' परिगृहमें है लक्ष्मी जानके पूजते हैं देखो इनकी धूर्त्तता अव्वल तो पाठ लिख दिया और अर्थ नहीं लिखा इसका कारण सूत्र में तो 'चैत्य' वृक्ष कहा है इन्ही लोगों ने जिन प्रतिमा के अभिप्रायसे भोले लोगों को वहकादेवे कि जिन प्रतिमा परिग्रह में है मित्र प्रथम तो यह समजना चाहिये कि परिग्रह किसको कहते है देखो साधु वस्त्र पात्र उपाधी रखते है सो मोक्ष सायवा निमित्त परन्तु ममत्व करे तो वोही परिग्रह है इसका भावार्थ परिग्रह ममता मूर्छा को कहा है जैसे—

यत् नसोपरिग्रहोवुत्तो नायपुत्तेणताईणो मुच्छापरिग्ग-होवुत्तो । इइवुत्तंमहसिणा ॥ २१ ॥ दश० ६ ॥

भावार्थ–परिग्रह ममता मूर्छा कहा है ।

दूसरा लिखा है कि लक्ष्मी जान के देवता पुजते हैं वंधव देवता के तो विमाण आदि सर्वरत्नोंके होते है जब तो उनका ही पूजना तथा नमोथुगं देना चाहिये परन्तु नमोथुणं तो जिन

प्रतिमा सिवाय किसी स्थान पर नहीं दिया है इसीसे (ए पी) का लिखना बिल्कुल मिथ्या है।

३ उक्त सुत्र अ० ८ [चिइयट्ठे) टीका—चैत्यानिजिन प्रतिमा टब्वा जिन प्रतिमा साधु प्रतिमा की वैयावच्च करे याने कोई जिन प्रतिमा की असातना करता होवे तो साधु उसी को उप-देशादिक देवे असातना टलावे जैसे व्यवहार सुत्र उ० १०। सिद्ध वैयावच्च करे तो जीव कर्म की निर्जरा करे। अब बतलावो साधु सिद्धों की वैयावच्च किस तरह से करे सिद्ध हुवा साधु सिद्धो की प्रतिमा की वैयावच्च करे देखो जैसे आप के गुरू जी के फोटू पर कोई अज्ञानी बालक पेशाब करता हो तो आप उस बालक उपदेश देके फोटू बचाओ कि नहीं जैसे एक गाव में वैष्णवों के मन्दिर मे एक मुखबंधे साधु की मूर्ति बना कर उनकी असातना करता था फिर स्थानकवासी श्रावकों को मालूम पड़ा तो उनके साथ विवाद कर उस साधू की असातना टलाई अब आप स्वयं विचार लेवें।

४ अ० १० साधु (चैत्र) नहीं देखे वह चक्षु इन्द्री के वि-षय का वर्णन है सो घर, हट, तोरण, दरवाजा, नगर देवकूल, प्रतिमा आदि चक्षु इन्द्रिय का विषय पोषण को नहीं देखे परन्तु

मन्दिर जाना प्रतिमा वन्दना आसरी नहीं है ऐसा होवे तो फिर गणधर महाराज प्रतिमा नहीं वन्दने से प्रायश्चित् क्यों कहे हैं स्वयं ही विचार करलो प्रिय ऊपर जो चैत्य शब्द का अर्थ लिखा है वो मेरी मती से नहीं परन्तु श्री भगवान् के फरमाये मुताविक पूर्वधारी आचार्यों ने कहा है वैसा ही मैंने आप को सुना दिया है ।

ए. पी. अव्वल तो पाठ ही आगे पीछे छोड के निशाचर की पर लिखा है दूसरा अर्थ भी विप्रत कूर्ण पूर्ण की तरह जिन आगम को परस्पर विरोधी वना दिया है जो (चेइयट्ठे) का अर्थ ज्ञान के वास्ते वैयावच्च करे तो उन से पूछना चाहिये कि नया दीक्षित गिल्याणि रोगी तपस्वीयों से कौनसा ज्ञान लेवे । प्रिय विचारने का विषय तो यह है कि इन लोगों को शब्द ज्ञान भी नहीं है तो श्री तीर्थंकर भगवान के आशय को कैसे समझते देखो 'चेइयट्ठे' 'निज्जराट्ठी' ये दोनों शब्दों के अन्त में ठे ठी है जिसका एक ही अर्थ कर दिया अब इनको क्या विशेषण देना चाहिये ।

पूर्व पक्ष—अजी प्रतिमा क्या आहार पानी करे है जो साधू उनकी वैयावच्च करे ।

उत्तर० प्रिय केवल आहार पानी करने वाले की ही वेयावच करते हैं, तो साधु सिंघ घण कुल की वैयावच कैसे करे सिंघ में श्रावक भी सामिल है प्रिय गीतार्थ गुरू से धारण करे तो कुछ ज्ञानकी प्राप्ति होती है ।

पूर्वपक्ष आप उक्त पदों का क्या अर्थ करते हैं ।

उत्तर० हमारे तो जो पूर्वाचार्य अर्थ कर गये हैं वो सुनो सिंघ घणकुल प्रतिमा इनकी कोई निन्दा हीलना असातना करता हो तो उनको उपदेश आदि से असातना नहीं करने देनी यह वैयावच है जैसे हरकेसी मुनिकी जक्षने वैयावच करी इत्यादि बोलो से सिद्ध हुआ कि साधु प्रतिमा की वैयवच करे जैसा सुत्र में वैसा प्रतिमा छत्तीनी में इति ॥११॥

विपाक में सुवाहुप्रमुख । आणंद सरिखा जोयजी ॥ उववाई अरिहंत चेइयाणि, अंवड प्रतिमा वंदी सोयजी। प्रतिमा ॥१२॥

अर्थ—श्री विपाकसुत्र मे सुबाहु आदि श्रावकों का अधिकार है सो आनन्द श्रावक आदि जिन प्रतिमा वांदि पूजी सो गाथा आठवीं के अर्थ में लिख आये हैं और उववाई सूत्र में चंपानगरी में जिन मंदिर कहा है सो सूत्र पाठ ।

[यत् बहुला अरिहंत चेइया] टीकार्थ और टव्वार्थ की गाथा १० के अर्थ में लिख आये हैं अब अंबड श्रावक का अधिकार सुनो सूत्र पाठ।

अंबडणोकप्पइ अन्नउत्थियावा अणउत्थियदेवयाणिवा अणउत्थेतपरिग्गहियाणिवा चेइयाइं वंदित्तएवा णमंसित्तएवा जाव पज्जुवासित्तएवा णणत्थअरिहंतेवा अरिहंतचेइयाणिवा।

टीकार्थ—गाथा ९ मी में आनन्द अलावे कर आये हैं यहां (अरिहन्तचेइयाणिवा) टीकाकार अर्हच्चैत्यानी जिन प्रतिमा इत्यर्थ ऐसा अर्थ किया है।

टव्वार्थ—अंबड नाम सन्यासी नइ नकल्पै जैननाश्रमण साधु की वाह्य, शाक्यादिक अन्य दर्शनी शाक्यादिक अन्यतीर्थीना देवता हरिहरविरंचिप्रमुख अन्य तीर्थी शाक्यादिक इपरिग्राह्या आपणाकरिनेथाप्या लेखव्या अरिहंतनाचैत्य वीतराग प्रतिमा वांदिवा हाथ जोडी नइ स्तुति करीवो नमस्कार पंचांग प्रणाम करीवओजावशब्दथकिस्तकारादिकना बोल पर्युपासना मन वचन कायाइं सेवा नाकरी वो। अनेरु नकल्पै, तोस्युं कल्पै अरिहंत साक्षात् वीतराग अनन्त ज्ञानी ते अरिहंतना चैत्य जिन प्रतिमा जिननी थापना ने वांदिवा नमस्कारादि करी कल्पै प्रिय

सूत्रार्थ में खुलासा जिन प्रतिमा वदनि गणधर भगवानने फरमा-दिया है तदपि 'ए पी' लिखता है कि मैं अपूर्व चूर्ण तेरे वास्ते लाया हुं इत्यादि ।

पाठको गणधरों का चूर्ण तो मैं उपर लिख आया हुं वे जैन जैनेतर में प्रसिद्ध है परन्तु 'ए पी' अपूर्व चूर्ण किस टट्टपुजीये की दूकान में क्या भाव खरीद किया है विचारने का विषय तो यहा गणधर का चूर्ण छोड के टट्टपुन्जीये का चूर्ण कौन विद्वान् लेगा शायद ए पी आप के गुरु और पाच पचीस भोली औरतें लेलेवें तो ताज्जुब नहीं ।

आगे 'अरिहन्तचेइयाणिवा' को अर्थ साधु किया है उस पर जैन० दि० श्री कुन्दकुन्दाचार्य का नाम लेके भद्रीक जीवों को जालमें फसानेका प्रयत्न किया है और गालिया दी हैं प्रियवर, जैन श्वेताम्बर दिगम्बर किसी आचार्य ने अवड अलावे 'अरिहन्तचेइयाणिवा' का अर्थ साधु किया हो तो हम को प्रमाण है परन्तु किसी आचार्यने ऐसा अर्थ नहि किया है जो ए. पी. उक्त आचार्य महाराजका ग्रन्थ सच मानना कुबूल करता हो तो हम श्री कुन्दकुन्दाचार्य के बनाये बहुत ग्रन्थों में श्री जिन प्रतिमा साधु श्रावक को वन्दनी पुजनी दिखला देवें

वर्तमान् भी दिगम्बर जैनी जिन प्रतिमा को मानते हैं कहो अब तेरा चूर्ण किस हवामें उड गया और भी भ्रम रहा हो तो सुनो भग० स० ३ उ० १ चमरेइन्द्र अधिकार [णणत्थ अरहंतेवा अरहंतचेइयाणिवा अणगारेवाभवियप्पाणो] इसमें साधुका तीसरा पाठ अलग है ।

प्रिय 'ए. पी.' तूं किस लाल लपेटामें आगया ले सुन सूत्र में साधु के १३ नाम कहे हैं श्री सुगडायंग सूत्र अ० १३ ।

१ समणेतिवा २ माहणेतिवा ३ खंतेतिवा ४ दन्तेतिवा ५ गुत्तेतिवा ६ पुत्तेतिवा ७ इसितिवा ८ मुणीतिवा ९ कित्तीतिवा १० विदुतिवा ११ भिरकुतिवा १२ लूहेतिवा १३ तीरट्ठीतिवा इति ।

देखो गणधर महाराजने साधुके तेरह नाम कहे हैं परन्तु चौदमा [अरिहंन्तचेइयाणिवा] नहीं कहा अब भी कुछ भ्रम रहा है ।

[पूर्व पक्ष] अरिहन्त और प्रतिमा वन्दनी कहै जब तो साधु अबन्दनीक ठहरेगा ।

(उत्तर०) जो तुम साधु अर्थ करोगे तो आचार्य उपाध्याय साधवी भी अःवन्दनीक ठहरेगा ।

प्रिय जैन सिद्धान्तोंके रहस्य को समजो जैसे एक सेठके

नामका जीता आवे उसीमें सेठका बेटा पोता आदि सब जीमने को जा सकते है ऐसे ही अरिहंत के नाम में आचार्य उ० साधु २ आगया (संग्रनयमत से) सिद्ध हुआ दुसरे पाठ में प्रतिमा अंबड श्रावक वादी है ।

पाठको ! अन्य सूत्रमें नगरी वाग भगवानका समोसरण तथा पुरुष वादगा जानेके अधिकारमें उववाइ की भोलामन दी जाती है कारण (उववाई)में से विस्तार वर्णन किया है जिसमें भगवान्का समोसरण सक्षेपसे लिखता हु । चित्रमें देखो ।

प्रिय ! भगवान्के समोसरण तीन दगा मे बिंब ' प्रतिमा ' स्थापना है जिसको चतुर्विध सघ वन्दे पुजे है और समोसरण में फूल ढिचण ' गोडा ' परमाण होते हैं अब प्रतिमा वन्दना पुजने मे क्या अकलपन्थीको कुछ भी शंका रहती है अपितु कभी नहीं ।

(प्रश्न) फूल सचित्त हो भगवान्की द्रव्य पुजा करता होवे तो ५ अभिगम में सचित्त वस्तु वारे भेली किम जावे ।

(उत्तर) प्रिय बाहिर रखे वो आपके उपयोगकी वस्तु जैसे पेरणा की फुल माला खाने का पान आदि परन्तु पुजा की सामग्री नहीं समजना देखो इसी उववाई सूत्र में

वन्दना के अधिकार गणधर महाराजने खुलासा मूल पाठ में फ़र-
मा दिया है सो सुनो मूल पाठ ।

**वहवेराइसर तलवर मांडंविय कोडुंविय इब्भसेट्ठि सेना-
वइ सत्थवाह पभितिओ अप्पेगइयावंदणवत्तियं अप्पेगइया
पुणवत्तियं एवंसंकारवत्तियं सम्माणवत्तियं इत्यादि ।**

अर्थ—अनेराइ वहवे घणा राजा मंडली कईसरयुवराजा तल-
वर मउड वहराजा न मांडंविय मडवना अधिपति कोंडु-
विय कुटंवना नायक गजांतलक्ष्मी जेहने नगर सेठ वड़ा सेना
चतुरंग सेना कटकना नायक सार्थवाह साथतांडासी सोभितना
चलावणहार पृभृतिए आदिदेइनइ एकेक पूर्वइक ह्याते वांदिवा स्तु-
ति कर वातिणेइज निमित्त आवे एकेक पूजा जिम पुष्पादिक
पूजिये तिम पूजाने इजनिमित्ते आवे इम सत्कार वस्त्रादिक
जिम सत्कारनेज निमित्त आवे सन्मान उठी उभा थाइवो
बहुमानदेवो तिणी निमित्त आवे ।

लो और सुनो अणयोगद्वार सूत्र मूल पाठ (तिलुकमहित
पूइयेंहिं)

अर्थ—त्रिलोक्य त्रिभुवन पति व्यंतर नर विद्याधर वैमा-
निकादिक समुदाय रूप तेणे वहित कहतां आनंदाशुवहति दृष्टेस

हर्षपणे निरख्याछे जेभगवन्ततेणे तथा महिता निकेवल गुणो कीर्त्तनरूप जे भावस्तव तेणे तथा पूजित कहता चदन पुष्पादिक द्रव्यपूजा करी पूज्याछे जे भगवन्त ।

अब समोसरण का फूलोंका पाठ समवायंग सूत्र में है सो सुनो मूल पाठ ।

जलथलयभासुरपभूतेणं विंटगवियदसद्ध वन्नेण कुसुमेणं जाणुस्सहप्पमाणमित्ते पुप्फोवयारे किज्जइ ॥ १८ ॥

अर्थ—स्थल कुसुम ते चपाजाई प्रमुप जल कुसुप ते कमलादिक भास्वर तेजवन्त प्रमुतघणा नीचाछेबीट जेहना एवले दर्द्धमुखे पाचवर्ण फुङेकरी टीचण प्रमाण फूलनी पूज फूलपगर करे इत्यादि ।

प्रिय अब आरा मीच के सोचो मूर्ति पूजा प्रमाण में कुछ कसर रही है देखो आप के तेरापथी एक दया उत्थापण के वास्ते कितनी कुयुक्तिरा तैय्यार करी हैं जैसे ही आप भी एक जिन प्रतिमा न मानने से श्री तीर्थंकर गणधर और पूर्व आचार्यों के बचनों कि असातना करनी पडी तो पिग अन्त का अन्तमें तो मूंठ सो मूठही रहेगा स्मरण रहे आखिरतो मूर्तिपूजे और मोक्ष नही है कारण आपकी श्रद्धा से आपकी गति देव-

लोक की होगी वहां तो मूर्ति पूजना ही पडैगा कहो फेर आप की यह संसार वृद्धी की कुयुक्ती करने में क्या फायदा हुवा बंधवो इस प्रवृत्ती को छोड के श्री वीतराग देवों के वचन पर आस्ता रख के उपर लिखी मूर्ति की सम्यक् प्रकार श्रद्धा रक्खो जिससे आपका जल्दी कल्याण हो इति ॥ १२ ॥

रायप्रसेणीसुरियाभेपूजी । जिवाभिगमविजयसुरंङ्गजी ।
धूवंदाउणंजिणवरंणं । ठवणेसाचेचैथेउपंङ्गजी ॥ प्रतिमा १३

अर्थ—राय प्रश्रेणी सूत्र में सुरियाभ देवता जिन प्रतिमा की १७, प्रकार की पूजा करी है यह वात जैनियों में प्रसिद्ध है तत्र मूल सूत्र पाठ ।

एवंखलु देवाणप्पियाणं सुरियाभे विमाणे सिद्धायपणे अठस्सयं जिणपडिमाणं जिणुस्सेह पमाण मेत्ताणं सणिण-खित्तं चिट्ठंति सभाएणं सुहम्माए माणवए चेइए खंभे वइरामए गोलवट्ट समुग्गएबहुओ जिणस्सकहाओ संणिखित्ताओ चिटंति ताओणं देवाणुप्पियाणं अणेसिच बहुणं वेमाणियाणं देवाणय देविणय अच्चणिज्जाओ जाव वंदणिज्जाओणंमसणि-ज्जाओ सकारिज्जाओ सम्माणणिज्जाओ कल्लाणं मङ्गलं, देवयं, चेइयं पज्जुवासणिज्जाओ तएयणं देवाणुप्पियाणं पुर्वि

करणिज्जं एयणदेवाणुप्पियाण पच्छाकरणिज्जं रायणं देवाणुप्पियाणं पुव्विंपच्छावि, हियाए सुहाए खमाए णिससाए अणुगामित्ताए भविस्सइ ॥

भावार्थ--सुरियाभ देवता ने उत्पन्न होते ही विचारा कि मुझे पहिला पीछे कौनसा कार्य हित का, सुख का, कल्याण का, मोक्षका करना है या भव २ में साथ चलने वाला है तब उक्त देवता के सामानिकदेव तथा पर्षदा के देव हाथ जोड के कहता हुवा स्वामी इस विमान में सिध्यतन में १०८ जिन प्रतिमा जिनेन्द्र देवों का शरीर प्रमाण याने [जघन्य ७ हाथ उत्कृष्टी ५०० धनुष्यकी आवगना] तथा सुधर्म सभा में जिनेश्वर भगवान् की डाढा है वो आप को या अन्य जितने ही देवताओं को वन्दना पूजना यावत् सेवा करना योग्य है वही पहला पीछे हितकारी, यावत् सुखकारी, कल्याणकारी, मोक्षकारी यह करनी भव २ में साथ चलने वाली है ।

इसी तरह जीवाभिगम सूत्र में वीजे देवता ने पूजाकरी है जिस का फल यावत् मोक्ष गणधर भगवान् ने फरमाया है कितनेक (ए पी) सरीखा भोला भाई जिन प्रतिमा जिन सरीखी कहने में हिचकते हैं परन्तु श्री गणधर भगवान् (धवंदाउणं

जिनवराणं) येह खुलासा फरमाया है कि धूप दिये जिनराज ने तो तुम लोक गणधरों की माफिक कहते क्यों सरमाते हो क्या गणधर भगवान का वचन सच्च नहीं मानते हो। प्रिय जैसे भैरव की मूर्ति को भैरव कहते हैं लकडी के घोडे को घोडा कहते हैं तो भगवान् की मूर्ति को भगवान् कहने में क्या हरजा है देखो अंतगड सूत्र में द्वारकानगरी को (पाठ पच्चक्खंदेवलोग-भूयाणए*) कहा है तथा भगवती आदि में (इदमोहेतिव†) आदि कहा हैं इसी से सिद्ध हुआ कि जिन प्रतिमा जिन सरीखी कहना सूत्र प्रमाण से हैं।

आगे चोथा उपांग पन्नवणाजी जिसके पद ११ वे में (ठवणेसच्चे) कहा है तथा चंपा आदि नगरी में अरिहंतों का मंदिर है सो पीछे लिख आये हैं देख लेना।

प्रिय सूर्याभ देवता के अधिकार में (प्रश्न) [उत्तर] बहुत से है वो हमारी बनाई सिद्ध प्र० मु० में अच्छी तरह समाधान किया है यहां नहीं लिखने का कारण यह है कि [ए. पी.] लस्करवाले ने प्रतिमाछत्तीसी का वृथा खंडन करने को कं०

---

* देवलोक कहं द्वारका कहं। † इंद्र प्रतिमा का मोछव को ईन्द्र मोछव कहिहे।

प्रकाशपत्र तारीख ३ डिसेंबर १५-अंक १० ११-१२-१३-१५ में लिखा था उस लेखके समक्ष हमने इस पुस्तक में लिख दिया है पाठको ने भली भांति पढ लिया होगा आगे का लेख हमको नहि मिला जिस से जो प्रतिमाछत्तीसीमें कहे हुवे सूत्र पाठसे सिद्धकर बतलायेगे शायद 'ए पी' मायावृत्तिसे लेख बध कर पुस्तक रुपे छपावेगे तो पाठकों को हम सुचना करते है कि उनकी समक्षा से हमारी सिद्ध प्रतिमा सु० देखलेनी चाहिये और हमारे को जो उनकी पुस्तक मिलेगी तो हम दुसरी आवृति में आगम अनुसार उत्तर दे के इस पुस्तकमें और बढा देवेंगे।

प्रिय पाठको ! इतना तो स्मरणमे रखना कि श्रीत्रिलोकी-नाथने ठाम ७ स्थापना मूर्ति 'जिनप्रतिमा' कही है तो क्या ३२ सूत्रों से कोइ निषेध कर सकेगा हर किसी विद्वान् स्थानकवासी से पूछ लो तो अवश्य कहेगा कि सूत्र मे जिन प्रतिमा चली है तो फिर 'ए.पी' ३२ सुत्रमें जिन प्रतिमा का खडन किस से करेगा क्या उनकी स्वकपोल कल्पित वातें कोइ विद्वान् मानेगा। अपितु कभी नहीं जोस्व वीर पुत्र है सो तो वीर वचनों पर ही द्रढ विश्वास रखेगा उनही का कार्य सिद्ध होगा ॥ १३ ॥

प्रथम तिर्थंकर मोक्षसिधाया । थू भकराया तीनजी ॥
जंबूद्वीप पन्नंत्ति देखो । सूर होयभक्तीमें लीन जी॥ प्रतिमा१४
जंभकदेवता प्रतिमा पूजी । सास्वतासिद्धायतन वहुजाणजी ॥
चंदपन्नंति सूर्यपन्नति । प्रतिमा कही विमानजी । प्रतिमा॥१५॥

अर्थ–सूत्र जंबुद्विप पन्नति भगवान् ऋषभदेव मोक्ष पधारे तब सक्रेइंद्र के आदेशसे देवतों ने तीन चैत्य शुभ कराइ है । सूत्र पाठ ।

यत् खिप्पामेव भोदेवाणुप्पिया सव्वरयणामए महए महालए तउचेइयथुभेकरेइ एगंभगवउतित्थगरस्स चिइगाए एगंगणहरचिइगाए एगंअवसेसाणं अणगाएणंचिइगाए- —

टीकार्थ—सर्वस्पष्टं नवरं सर्वात्मनारत्नमयान अन्तर्बहिरपिरत्नखचितान् महातिमहतोऽति विस्तीर्णान् आलप्रत्ययः स्वार्थिकः प्राकृतप्रभवः त्रीन्चैत्यस्तूपान चैत्याश्चित्ताह्लादकाः स्वरूपाश्चै य स्तूपास्तान कुरुत चिंताव्याक्षतित्यर्थ आज्ञा करण सूत्रे ।

टब्बार्थ–एक कहे रत्नावलो अहो देवानुप्रिय सर्व रत्नमय मोटो अत्यंत विस्तीर्ण एहवा त्रिणिस्थभकरो एकभगवंत तीर्थकरनी चयने विषय एक गणधर नीचयने विषय एक अवशेष कता साधु नीचयने विषय विचारई ते घणा देवता जाव स्थुभ करे

(प्रश्न) यह तो देवता का जीत आचार है परन्तु धर्म नहीं सूत्र में धर्म कहा होवे तो मूल सूत्र पाठ बतलाना चाहिए।

(उत्तर) प्रिय ! अव्वल तो यह समझो जीत आचार किस को कहते हैं सो सुनो जीत (याने, अवश्यमेव करने का काम जैसे श्रावक सनायक प्रतिक्रमण करे सो जीत आचार है और तुम कहते हो कि मूल पाठ बतलाना था सो लो सुनो।

केई जिणभत्तीए केईजीअमे अंतकट्टु केई धम्मोत्ति कट्टु गेण्हंति।

टीकार्थ–केचिज्जिनभक्त्याजिनैनिर्वृत्तं जिनसक्रियाजिनवदाध्यमिति केचिज्जितामिति पुरातनैरिदमाचीर्णमित्यस्माभिरपिद कर्त्तव्यमिति केचिद्धर्म्मः पुण्यमिति कृत्वा।

टब्बार्थ—केतलाइक तीर्थंकरनी भक्तिजाणी ने केतलाइक जीत आपणी आचार छे एहवा कहीने केतलाइक धर्म जाणी ने यह उक्त सूत्र में जो अमर देवता का वर्ण सूत्र में से विस्तार कहा है जिन डाढों जिन मंदिर जिन प्रतिमा १७ प्रकार की पूजा सूर्याभदेवता की तरं समझ लेना मूल पाठ।

यत् तासिणउत्तरपुरच्छिमेणं सिद्धायणा एमचेव जिणघराणविगमा। सव्वरयणामया जिणपडिमावणव जाव धूवकडच्छुगा।

इस की टीका और टब्बे में बहुत विस्तार है और उक्त सूत्र में पर्वतों के उपर वहुत सा सास्वता सिध्यायतन कहा है आगे चंदपन्नती सूर्यपन्नति सूत्र में चंद्र सूर्य की राजधानी विमाण का वर्णन है जिस में जिन मंदिर जिन प्रतिमा जिन डांडों का बहुत अधिकार है देखना हो तो सुत्र मौजूद है शिय जहां देवता प्रतिमा पूजा का अधिकार है वो सुर्याभदेवकी भोलामण से सब ठिकाने सुर्याभ देवता की तरें समझ लेना इति ॥ १५ ॥

निरयावलिका पुफियामांहे । चंपानगरी जाणजी । उववाई में वणन किधो, अरिहंत चैत्य प्रमांण जी । प्रति० ॥ १६ ॥
तीजे वर्ग दशोईदेवता, पूजा नाटक विध जाणजी । चौथेवर्ग दसोईदेवी । प्रतिमापूजी वहु मांनजी ॥ प्रतिमा ॥ १७ ॥
पांचवेंवर्गे द्वारकानगरी । वारे श्रावक की जोडजी । चंपानी परे नगरी सोभे । श्रावक पूजी होडा होडजी । प्रतिमा १८॥

अर्थ—निरयावल का सूत्र पंच वर्ग है जिस में चंपा राजगृही सब थी बनारसी द्वारका आदि नगरियां में चंपा की बोलावण है सो उववाई में (बहुला अरिहंत चेइया) पाठ से नगरियों में मंदिर पीछे लिख आये हैं और चन्द्रमा सूर्य शुक्र बहु पुत्तीया सीरी हरी धृतिकर्त्ता आदि देव देवियो ने सुर्याभकी तरें १८प्रकार की जिन प्रतिमा की पूजा करी है ।

औंर निसढादी १२ आनद श्रावक की तरे प्रतिमा पूजी है पाठ [एहे कियबलीकम्मा] इसी से यहा ज्यादा विस्तार नहीं किया है ।

दसमें अध्ययने गोतम स्वामी, तीर्थ अष्टापद जायजी ।
उत्तराध्येन अठारमें देखो, क्ह्यो उदाईरायजी ॥ प्र० १९ ॥

अर्थ—उत्तराध्येन सुत्र दसमा अ०

द्रुमपत्तए पडुयए जहानिवडइ राग्रगणाणअच्चए ।
एवंमणुयाण जीवियं समय गोयम मापमायए ॥ १ ॥

इस गाथा में ४ ज्ञान १४ पूर्वका धगी सदा अप्रमत्त सजय धारी गोतम स्वामी को श्री वीर प्रभुने उपदेश किया है (संयम-गोयम मापमायए) इस उपदेश का आशय अति गभीर है ।

परन्तु आधुनिक समयमें उस गभीर आशयको विना समजे अनेक विकल्प उठते हैं उन महाशयको चाहिये कि पूर्व आचार्योंके उस गभीर आशयके अनुसार किये हुये अर्थ पर ही द्रढ विश्वास रक्खे । प्रिय पूर्वाचार्य नवने दसवे अध्ययन के संबध में उक्त गाथा का अर्थ वृत्तीकार से विस्तार किया है उनको सपूर्ण लिखें तो ग्रथ बढ जावे इसी से इस सबध पर मुद्दे की वात लिख देता हू पृष्ठ चपानगरी में साळ राजा महासाळ जुगराजा राजा

के बैन यशोमती बेनोई पिट्ठर भानजा गांगेल है श्री वीर प्रभु की देशना सुण साल महासाल गागलिभांनजे को राज देके दिक्षा ग्रहण करी थी ११ अंग पढ कर राजमही नगरी आया भगवान् से अरज करी गोतम स्वामी के से थे, पीछे चंपा पधारे भगनी १ बःनोई २ भांनजा ३ इन तीनों कों दीक्षा दी । पीछे राजगृही आते समय साल महासाल पिट्ठर यशोदा गांगेलिए ५ जिन आत्म भावना भावतों को केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ भगवान् के पास आय पांचों ने प्रदक्षिणा देके केवली परपदा में बैठे गोतम-स्वामी वारेतो भगवाने ने फरमाया गोतम केवली की असातना हुई तब गोतम स्वामी केवली खमावि मन में चिंतवे कि मेरे प्रति बोधियों को केवल ज्ञान हो जाता है परन्तु मुझे क्यों नहीं होता ? उस समय देव ध्वनि हुई कि आज भगवान वीर प्रभु ने व्याख्यान में फरमाया है ।

(यत्—अद्य भगवता व्याख्यावसरे एवमादिष्टं यो भूमि-चरः स्वलब्धा अष्टापदाद्रौ चैत्यादि वन्दतेस तेनवभवै सिद्धी-यांतीति श्रुत्वा गौतम स्वामिनं प्रच्छति भगवन्तम हमष्टापदे चैत्यानि वन्दितुं यामीति भगवतांक्त व्रजाष्टापदे तत्र चैत्यानि वन्दस्व ततो हृष्टो गौतमो भगवच्चरणो वन्दित्वा

तत्रागतः पूर्वंहि तत्राष्टापदे तादृग् जनसवाद श्रुत्वा पञ्च पंचशतपरिवारान्वयः कोडिन्त१-दिन्न२ सेवाला३ स्त्रयस्ताप सागता सन्ति तेषु कोडिन्नस्तापस सपरिवारह एकान्तरो पवासेन भुक्ति शरणे मुलकन्दान्याहारयति सोष्टापदे प्रथम मेखला मारुढोस्ति द्वितीयो दिन्न तापसः सपरिवारः प्रत्यह ष्टष्टपारणके परिसाटितानि परणानिर्भुंक्तेसः द्वितिय मेखला-मारूढोस्ति तृतीयः सेवाल तापसः सपरिवारो निरन्तरमष्टम-पारणके सेवाल भुक्तेस तृतीय मेखलामारूढोस्ती एवंतेषु गौतमः सूर्यकिरणावलम्बेन तत्रारोढमारंधः ते तापसाश्चिन्त-यन्ति एषः स्थूलपु' कथामत्राधिगेदु सक्यतेवयं तपस्वीनोपि अशक्ताएवं चिन्तयत्स्वेव तेषुपश्यत्सु स गौतम क्षणादष्टापद-पर्वतासिखरमधिरूढ ते पुनरेवं चिन्तयन्ति यदासाववतरिष्यति तदास्यभिष्या वयंभविष्यामः गौतमस्वामी प्रासादमध्ये प्राश्री निज निजवर्ण परिमाणोपेताश्चतुर्विंशति जिनेन्द्राण भरतका-रिता' प्रतिमाववन्दे तासा चैवं स्तुतिं चकार जगचिन्तामणि जगद्दनाह जगगुरु जगरखुण इत्यादि स्तुतिं कृत्वा)

भावार्थ—भूचर पोता की लब्धि से अष्टापद पर भरत कराया चैत्य (प्रतिमा) वन्दे वो उसी भवमें मोक्ष जावें ये वात

सुन गौतम स्वामी ने भगवान् से अरज करी अष्टापद चैत्य, (प्रतिमा) वंदु तव भगवान् रजादिवि पाठ (समयं गोयम मापमायए) गोतम समयमात्र भी प्रमाद मत करो भगवान् की आज्ञा से गौतम स्वामी अष्टापद तीर्थ उपर पधारे व भरतचक्रवर्ति के भराएवे २४ तीर्थंकरों के वर्ण शरीर प्रमाण की जिन प्रतिमा को वंदि जगचिंतामणि आदि चैत्य वंदन किया पीछे पधारे वो १५०३ तापसों को प्रतिबोध दिया इत्यादि वहुत विस्तार है इसका अर्थ तो स्थानकवासी भी प्रतिमा ही करते है।

(प्रश्न) भरतचक्री को असंख्याकाल हुवा और भगवती स० ८ उ० ९ में कृतच्वी वस्तु की संख्याताकालकी स्थिति कही है तो भरत भराया (विंव) कैसे सिद्ध होवे।

(उत्त०) प्रिय भगवती में स्थिति कही सो स्वाभाविक वस्तु की है और (प्रतिमा) रही सो देव सहायता से रही है जैसे जम्बूद्वीप पन्नती सूत्र मूलपाठ में पहिले आरे का वर्णन वावी पोषरणी आदि कही है तो विचारो सास्वती तो सूत्र में चली नहीं ९ कोडा कोड सागर तक कर्म भूमि मनुष्य था नहीं तो वतलावो वो वावी आदि किसने कराई जैसे वावी आदि देवताओं की सहायता से रही वैसे ही भरत भराया बिंब (प्रतिमा) रही यह वात निशंक है।

आचारांग सूत्र में तीर्थ यात्रा कही है और जंघाचारण विद्या चारणमुनि तीर्थ यात्रा करि हैं अब भी गौतमस्वामी के परंपरा वाले मुनि तीर्थयात्रा कर रहे हैं जैसा सूत्रमें था वैसा प्रतिमा छत्तीसीमें लिखा आगे इसी सुत्रका अ० १८ में उदाई राजा हुवा सो ध्यान देके सुनो ॥ १९ ॥

प्रभावती रांणी नाटक कियो, जिन भक्तीमें रागजी ।
गुणतीस अध्ययनेचैत्यवंदको, फलभाष्योवीतरागजी॥प्र.२०॥

अर्थ—उत्त० अ० १८ ।

सोवीर रायवसभो चइत्ताणमुणिचरे ।
उदायणोपव्वइओ पत्तोगइमणुत्तर ॥ ४८ ॥

प्रिय ! उदाई राजा का विस्तार से वरणन सूत्र में हैं तथापि मैं प्रभावती राणी जिन प्रतिमा आगे भक्ति से लीन होके नाटक किया है वो लिखता हू ज्यादा देखना होतो सूत्र मेरे पास मौजूद है देखलो ।

यत् तत्रोदायन राजपट्टराज्ञी चेटकराजा पुत्री प्रभावती नामनी श्रमणोपासिका तत्र याता तत्र तस्या मंजूषाया पणांकृत्वा एव भणति गयराग दोसमोहो सव्वन्नूअट्ठपाड हरसंजुत्तो देवाधिदेव गुरुओ अइरामें दंसणंदेउ १

एवं उक्तातया मंजुषायां हस्तेन परस्तुपहारो दत्तः उद्-घाटिता सापंजूषा तस्यां दृष्टातिव सुन्दरामलान पुष्पमालालंकृता श्रीवर्द्धमान स्वामी प्रतिमाजात जिनसासनोन्नतिः अतिवानंदिता प्रभावती एवं वभाण सव्वन्नु सव्वदंसण अपुण भवा भविय जगमणाणंदजय चिन्तामणिजय गुरुजय २ जिणवीर अकलाङ्क १ तत्र प्रभावत्था अन्तःपुरमध्ये चैत्य गृहंकारितं तत्रयं प्रतिमास्थापिता तांच त्रिकालंसापवित्रा पूजयति अन्यदा प्रभावती राज्ञी तत्प्रतिमाया पुरोनृत्यति राजा च वीणांवादयति ।

भावार्थ—वीदुन्माली देवता चूलहेमवन्त पर्वत से गोसीसचंदन लायके श्रीवीर प्रभू की प्रतिमा वनाई× एक मंजुसेमे रखके वीतवयपाटण भेजी वहुत अन्यमती लोक अपना देवउदेशी मंजुसेको खोले पिण खुले नहीं तद उदाई राजा की राणी चेडाराजा कि पुत्री महासती प्रभावती राणी देवाधिदेव उद्देशी के मंजूसे को खोली श्रीवीर प्रभूकी प्रतिमा ले अपने अन्तेवर (घर) के मंदिर में स्थापना करी त्रिकाल अष्ट प्रकारकी पूजा करती एकदासमय प्रभावती रानी जिन भक्ती में अति उत्साहित होके

× इसं प्रतिमाकि प्रतिष्टा लीकपील केवलीने कीनी है ।

जिन प्रतिमाके आगे नाटक करती हुई राजा उदाई वीणा बजा रहे थे इत्यादि ।

इस विषय में प्रिय भद्रबाहु स्वामी ४ ज्ञान १४ पूर्वधारी ने आवश्यकसूत्र निर्युक्ति में कहा है ।

यत् (अतेउरचेइयहरकारीयं प्रभावती एरहाताति संझं अर्चेई अन्नयादेवीणचई रायावीणं वायेइ)

भावार्थ–प्रभावती रानीने अपने महल के अन्दर जिन मन्दिर बनवाया प्रभावती रानी स्नान करके त्रिकाल जिन प्रतिमा का पुजन करती है एकदा समय रानी नित्य पुजा कर रही है और राजा वीणाको बजा रहा है ।

प्रिय प्रभावती राणी का अधिकार इसी मूजिब स्थानकवासीयों की प्राचीन शास्त्रकी प्रता है उनमें से करीव २०-२५ प्रता मेरे पास मौजूद है यदि कुछ सका हो तो देख लो ।

और इसी अध्ययन गाथा ३५ में सागर चक्री के ६०००० पुत्रोंने अष्टापद तीर्थ की रक्षा के वास्ते खाई खोदी इत्यादि सम्बन्ध है उनको भी (स्थान०) व्याख्यान में वाचते हैं फिर न जाने ये लोग प्रतिमा किस वास्ते यहाँ मानते हैं ।

आगे अ०२९मा बल ७२में से१४ वा चैत्यवदनाका फल।

यत्–टीकार्य–प्रत्याख्यानानंतरं चैत्यवन्दना कार्या अ-सवत्फलं प्रश्न पूर्व माह (थयथुइ मंगलेणंभंते जावे किं जणयइ थयथुइ मंगलेण नाणदंसण चरित्तेचबोहिं लाभ जणयइ नाणदंसण चरित्तबोहि लाभ संपन्ने यजीवे अन्तकिरियं कप्पाविमाणो ववात्तियं आराहणं आराहेइ १४)

भावार्थ–चैत्य वन्दन का फल नंण दर्शन चरित्र बोधबीज का लाभ होता है बोध बीज के लाभ से जीव अन्त-क्रिया (मोक्ष कल्प विमानोपपातिकां आराधनां आरा-धयाति) ।

प्रिय यह चैत्यवन्दन से यावत् मोक्ष कहा है अब तो आप संतोष कर इस वीर वचनों को आराधो जैसा सूत्र में वैसा प्र-तिमा बत्तीसी में ॥ २० ॥

दसवैकालिक सिज्जंभवद्ध । प्रतिमाथी प्रतिबोधजी ॥
जाणगभवियसरीर निक्षेपा । अणुयोगद्वारल्योपोधजी ॥
प्रतिमा ॥ २१ ॥

अर्थ–श्री दशवैकालिक सूत्रके कर्त्ता श्री स्वयंभवसूरि शान्ति-नाथ जी की प्रतिमा को देख के प्रतिबोध हुये ।

यत्-सिज्जंभवं गणहरांजेण पडिमादंसणेणपडिवुद्दं ।

और इसी सुत्र के अध्य० ८ गा० ५५ ॥

यत्-चित्तभित्तिण णिज्झाए । नारी वासु अलंकियं ॥
भक्खरं पिवदट्ठुण । दिट्ठिंपडि समाहरे ॥ ५५ ॥

मतलब साधु जिस मकान में स्त्रियों के चित्राम बने हो वे तो उस मकानमें नहीं रहे ।

विद्वानों को विचार करना चाहिये जव स्त्री की मूर्ति से विषय विकार उत्पन्न होवे तो श्री वतिरागकी निर्विकार शान्त मूद्रासे वैराग्य उत्पन्न क्यों नहीं होवे अवश्य होवे आगे अणयोगद्वारमें (जाणग शरीर)

यत्-जहाकोदिट्ठतो अयंजय कुम्भेआसी अयंमहु कुम्भे आसी सेतंजाणयसरिर ।

जैसे जवुद्वीप पन्नति में श्री रिषभदेव भगवान् मोक्ष पधारे उनके शरीरकी इन्द्रादिक वन्दन पूजन करी ।

भवय सरीर पाठ ।

यत्-जहांकोदिट्ठतो अयंमहुकुम्भेभाविस्सइ अयघय कुम्भे भविस्सइ सेतम्भावियशरीर ।

जैसे तीर्थंकरों के जन्मसमय में इन्द्रादिक वन्दन पूजन करें [आगे निक्षेपे सुनो]

जन्थजयं जाणेज्जा । निरवेवं निक्खेवे निरवसेसं । जथावि य नज्जाणेजा । चउक्कयंनिक्खिवेतथ ॥ ९ ॥

अर्थ—जहां जिस वस्तु में जितने निक्षेपे जाने वहां उस वस्तु में उतने निक्षेपे करे और जिस वस्तु में अधिक निक्षेपे नहीं जान सके तो उस वस्तु में चार निक्षेपे तो अवश्य करे ।

॥ श्री अर्हंतों के ४ निक्षेपाः ॥

(१) अर्हंतों का नाम लेना सो नाम निक्षेपा ।

(२) अर्हंतोकी प्रतिमा थापनी सो स्थापना निक्षेपा ।

(३) अर्हंतों का अतीत अनागतकाल सो द्रव्य निक्षेपा ।

(४) अर्हंतके ३४ अतिशय आदि समोसरणवत् सो भाव निक्षेपा इसी तरह सब वस्तु में समजना इसमें हमारे स्थानकवासी भाइ नाम निक्षेपको वन्दणीक मानतें हैं और स्थापना निक्षेप को एऽवन्दनीक मानते हैं ।

परन्तु दीर्घ दृष्टिसे विचार तो करें स्थापना में नाम मिले है नाम से स्थापना में गुण की वृद्धि ज्यादा है जैसे ।

---

[१] नाम आचारागकी माला फेरो [२] स्थापना आचाराग पुस्तक वाचो ज्ञान ज्यादा किसमें है	(१) नाम जबूद्वीप की माळा फेरो (२) स्थापना जबूद्वीपका पट देखो ज्ञान ज्यादा कीसमे है।
(१) नाम विलायतकी माला फेरो (२) स्थापना विलायतका (नकशा,फोटु देखनेसे [अमेरिका आफ्रिका जर्मन जापान लंडन आदिका ज्ञान होताहै	(१)नाम हिंदुस्थानकी माला फेरो (२) स्थापना हिंदुस्थान का (नकशा) फोटु देखो (पूर्व पजाब राजपूताना दाक्षिण आदि पर्वत नदी रेल्वे आदि का ज्ञान हो जाता है।
[१] नाम अरिहंताकी माला फेरी [२] स्थापना अरिहंताकी मूर्त १ देखोमुर्तिमें नाम सामील है इसीसे नाम से स्थापना मे गुण ज्यादा है.	(१) नाम जैनीयाका देव २ (२) स्थापना जैनीयाका देव की मुर्ती जादा ज्ञान की समे है सय वीचार करे.

प्यारे अब सोचो ज्ञान ज्यादा किस में है क्या राम सेन्या कि तरह, केवल, राम २ से ही सिद्धि नहीं है जरा मतलब भी समझो जिस से कल्याण हो ।

पूजा विषय गाथा १२ मी के अर्थ में लिख आये हैं इतिः ।

थुभकह्योश्री नन्दी सूत्रे । मुनिसुव्रत विशालामाय जी ।
व्यवहारसूत्रेआलोयणालेवे । मुनिप्रतिमापासेजायजी ॥प्र०२२॥

अर्थ---नन्दी सूत्र मूल (थुभ) यह विशालानगरी में श्री मुनिसुव्रत भगवान का थूभ के प्रभाव से नगरी का बचाव हुआ यह बात स्थानकवासियों में प्रसिद्ध है व्यवहार सूत्र उदेसा १ में आलोवणा अधिकार में जो साधू के प्रायश्चित लागे तो आचार्य उपाध्याय बहुश्रुति, घणा आगम का जाण पासे आलोवे १ कदाचित्त आ० उ० नहीं होवे तो संभोगी साधु पासे आलोवे २ कदाचित् संभोगी० नहीं हो तो रूपसाधु कने आलोवे ४ रूप साधु नहीं हो तो पछाकडा श्रावक पासे आलोवे ५ पच्छाकडा श्रावक नहीं हो तो ।

यत्-जत्थेव सम्मंभावियाइं चेइयाइं पासेज्जा कप्पेइ सेतस्सीतिए आलोइत्तएवा ।

अर्थ---सम्यक् भावित एटले सुविहित प्रतिष्ठित जिन प्रतिमा (**चैत्यंजिनौकस्तद्बिंबमितीवचनात्**) एकी प्रतिमा देखे कल्पे

वेहनी पामे आलोचवु यह सूत्रार्थ में खुलासा जिन पडिमा पासे आलोयणा लेने ।

(प्रश्न) क्या प्रतिमा जी प्रायश्चित्त दे सकती हैं ।

(उत्तर) प्रिय इस अलावा आगे गाम, नगर के बारे में सिद्धों की साख से आलोचना ले तो सिद्ध क्या आलोयणा सुन प्रायश्चित देते हैं ।

प्रिय ! यह तो दोनों कारण हैं कार्य तो अपने पाप का पश्चात्ताप करे तो अंतःकरण से पाप को प्रगट करना इसी से देव गुरु की अलोचते हैं इति ।

निसीथ कल्पदशासुतस्कन्दे । नगरियां को अधिकार जी ।
चंपानिपरे मंदिर सोहे । वीतराग वचन लो धारजी प्र ॥२३॥

अर्थ—निसीथ तथा वृत कल्प दशाश्रुतस्कन्द मे चम्पा आदि नगरिया हैं जिन में उववाइ सूत्र के परे (बहुला अरिहंतचेइया) जिन मंदिर कर शोभायमान हैं फेर दशाश्रुतस्कन्द अ० ८ में श्री वीर प्रभु के पिता सिद्धार्थ राजा ने जिन पतिमा पूजी है एव त्रसलादे राणी सो पाठ ।

यत् (सहस्साहसिएव जाएयदाएय इत्यादि)

व्याख्या (सयसाहस्सिएय) लक्षप्रमाणान् (जाएय) यागान् अर्हत्प्रतिमापूजाः भगवन्मातापित्रोः श्री पार्श्वनाथ सन्तानीय श्रावकत्वात् यजधातोश्चदेवपूजार्थत्वात् याग शब्देन प्रतिमापूजाः एवंग्राह्या अन्यस्य यज्ञस्य असंभवात् श्री पार्श्वनाथसन्तानीयश्रावकत्वं चानयोराचारांगे प्रति पादितं (दाएय) दायान् पर्वदिवसादौ दानानि ।

यह मूल सूत्र में मन्दिर प्रतिमा पूजा का अधिकार है ॥इति॥२३

आवश्यक महिमा शब्द विचारो । भरत श्रेणिक भराव्या । बिंदजी । वग्गुर श्रावक पुरिमतालको । केइचैत्यकराव्याथु भजी ॥ प्र० २४ ॥

अर्थ—उक्त सूत्र लोगस्स में (कित्तिय वंदिय महिया) जिस में कीर्ति वंदना ये दो शब्द भाव पुजावाची हैं और (महिया) शब्द द्रव्य पुजावाची है । टीका का भी एसा ही अर्थ किया है आगे भर्त्तचक्रिका अधिकार सुनो।

यत्—थूभसयभाउआणं । चउवीसचैवजिणघरेकासी ।

सव्वजिणाणंपडिमावणेणं । पमाणेहिंनियएहिं ॥२३६॥

अर्थ—भरतचक्रवर्त्तिने अपने सौ भाइयों के सो स्तूप चन-

वाए और चोवीस तीर्थंकरोंके मंदिर तथा उनके अन्दर वर्ण तथा प्रमाण करके युक्त उनकी प्रतिमायें (अष्टापदपर) बनवाई और सुनो ।

यत्-अकसिणपवत्तगाणं विरया विरयाणं एससलुजुतो
संसारपयणुकरणो दव्वत्थए कूवदिट्ठन्तो ॥ ६ ॥

- मतलब द्रव्य पूजासे संसार पतला करे याने क्षय करे श्रावक कूप द्रष्टांत श्री योगशास्त्र आदि में श्रेणिक राजा ने मन्दिर बनाया और १०८ सोने के जवँ * से हमेशा जिन प्रतिमा आगे साथीयो करता और पूजा का अधिकार पीछे लिख आये है आगे वग्गुर श्रावक का अधिकार सुनो ।

यत्-तत्तोयपुरिमिताले । वग्गुरइसाण अचए पडिमं, मल्लि-
जिणायपणपडिमा अन्ताएवसि बहुगोट्टी ॥

इसका मतलब यह है कि पुरिमताल नगर में वग्गूर श्रावक ने मल्लीनाथ भगवानका मंदिर बनवाके सपरिवार जिन प्रतिमाका पूजन किया।

इनके सिवाय भी जैन सिद्धान्तो में मूर्तिका अधिकार बहुत है मगर इन लोगों ने ३२ सूत्र मान रखा है जिस से

* स्था० मेतारजमुनि की ढाल में गाते है कि राजा श्रेणीक १०८ जब करानेथे तब प्रतिमाकी क्यों नहीं मानते अवश्य मानणा चहीए ।

२२ सुत्रका प्रमाण दिया है ज्यादा देखना हो तो महानसीथ आदि सूत्रमें देखो।

(प्रश्न) अजी महानसीथ तथा सिंधुदोलावली संघ पट्टक मे तो मंदिर मूर्तिका निषेध किया सुनते है

(उत्तर) प्रिय! किसी गुरु गम से उक्त शास्त्र पढो उन में तो मंदिर मूर्ति की स्थापना है उक्त ग्रन्थकर्त्ता जैन आचार्य महाप्रभाविक श्री जिनवल्लभसूरी तथा जिन दत्त सूरीजी हुए है उक्त ग्रन्थ में अविदिचैत्य * और साधु माल आरोप करने तथा चैत्य से साधू आजीविका करने का निषेध है परन्तु उन्हीं महात्माओं के हस्तकमल से प्रतिष्ठा करावे अनेक सिखरवन्ध मन्दिर है वो मारवाड मेवाड गुजरातादि में मौजुद है और महानिसिथ का नाम तुम लेते हो तो फरमांओ महानिसिथ सूत्र किस ने फरमाया है।

(पूर्वपक्ष) महानसिथ अ० ५ मे गौतम स्वामी को श्री वीर प्रभु ने फरमाया है।

(उत्तर) प्रिय! यह बात आप को मंजुर है कि महानसिथ वीर प्रभु ने फरमाया है तो लो सुनो।

* अविदीचैत्य जैसे मान ममता आजीविका आदिके वास्ते करावे

(१) अध्ययन २ में अष्ट प्रकारसे पुजा करनी कही है।

(२) अध्ययन ३ में मन्दिर बनाने वाला १२ वेदेवलोक जावें।

(३) अध्ययन ४ में संसार पातला करे इत्यादि। ज्यादा देखना होवे तो माहानसिथ सूत्र मुल पाठ में देख लेना चाहिए।

विचारो क्या तिर्थंकरों के वचन ऐसे परस्पर विरुद्ध होवे हैं कि अ० २-३-४ में तो मूर्ति मन्दिर कह दिए और पाच अध्ययन में निषेध करदेवे (वाह) पिण आपने तो जैन सिद्धान्तों को कुरान पुरान बना दिए।

शायद आप कह देंगे कि हम उपर लिखे अध्ययन नहीं मानते तो आप की अज्ञानता विद्वानों से छिपी नहीं रहेगी कि २-३-४ अध्ययन तो नहीं मानना और ५ मा अध्ययन मानना।

प्रिय पाचवा अध्ययन में ही सपृष्ट मन्दिर मुर्ति सिद्ध है परन्तु आपकी जैसे आदमी को (पीलिया) होजावे जब सफेद वस्तु पीली दीखे उस में आदमी का दोप नहीं है कारण पीलिये का ही दोप है ऐसे ही आप को असत्य अज्ञान का पीलिया हो रहा है जिस से ५ वें अध्ययन में मन्दिर मुर्ति सिद्ध है तो पिण आप को निषेध मालूम होता है इसी में और

आप क्या करें दोष तो असली अज्ञान का है उस को आप दूर कर दो तो अभी मालुम होजावे।

लो सुनो महानसिथ अ० ५ का—

मतलब उस समय साधु चैत्यावासी देव द्रव्य भक्षी लिंगधारी भ्रष्टाचारी मीथ्यादिष्टी चैत्य ममता चैत्य से आजीविका करने वाला † श्रीकमल प्रभाचार्य से कहता हुआ भगवान आप एक चोमासा करे आप के उपदेश से हमारे बहुत मंदिर हो जावेंगे यहां चैत्यवासी अपनी ममता आजीविका निमित्त अर्ज करी है उस पर श्री आचार्य महाराज ने फरमाया (जइविजणलए) यद्यपि जिन मन्दिर है इसका मतलब जिन मन्दिर याने विधि * चैत्य की स्थापना करी परन्तु उस भ्रष्टाचारी की ममता भाव के कहने पर आचार्य महाराजने कहा है (तहावीसावद्यमिणं नाहंवयामि) जिन मंहिर हो तो पिण तुम्हारा जिन आज्ञा विरुद्ध कार्य सावद्य है ऐसा वचन में नहीं बोलुं तो मंदिर कराना कहां रहा इत्यादि जैसे कोई आजीविका इस लोक पर-

---

† विधि चैत्य ५ प्रकार मंगल भक्ति० निशाकं० अनिशकृ० सास्वता।

* साधु जिन मंदिरका उपदेश देवे परन्तु आप मंदिरमें निवास या ममत्वा नही करे या उसी से आप भी आजीवका नही करे।

लोक की वाछा से सामयिक पोसह आदि करे तो उसी को आ-विदीजाण साधु निषेध करे परन्तु यह नहीं समझना कि सामायक पोसहाका का निषेध होगया।

प्रिय अविधि का निषेध करने से विधि की स्थापना आप से ही होगई उसी से उक्त ३ शास्त्र में विधि चैत्यका मडन और अविधि चैत्य का खडन सिद्ध हुआ ३२ सुत्र में मुर्ति है जैसा सुत्र में वैसा प्रतिमा छत्तीसी में इति, ॥

वादी कहे आतो पंचांगी । मेंतो माना मूल जी ।
वज्रभाषा बोले ऐसी । नहीं समकित को सूलजी ॥५०

अर्थ–यह उपर ३२ सूत्र से मूर्ति सिद्ध है उन को देख के कितने ही कह देते है कि यह वो पंचागी है हम वो मूल सूत्र को मानते है।

प्रिय यह भाषा कैसी वज्र समान है वज्र से तो एक ही भव में मरणो होवे परन्तु एसी भाषा से तो भव २ चतुर्गति परिभ्रमण करना पडता है कारण अर्थ श्री अरिहत फरमाते हैं और सूत्र गणधर रचते हैं यत् (अत्थमासई अरहा सुत्त गुंत्यइ गणहए) ए अण योगद्वारका वचन है अब विचारो यह अर्थ अरिहंतो के फरमाये नहीं मानना और भद्रिक जीवों को

फंसाने के धिये छलबाज़ी करके कहना कि हम मुल सूत्र मानवे हैं तो हम उपर सूत्रों का मूल पाठ लिख आये हैं उन ही को क्यों नहीं मानते हो श्री वीर प्रभु के वचन नहीं मानने वाले समकित का सुत होवे कहे सो अपितु न होवे इति।

पंचांगीतो कही मानणी । सुणसूत्र की साषजी ॥
समवायंगद्वादशांगहुडी जिनवरगणधर भाषजी ॥ प्र० २६॥

अर्थ मूल सूत्र में पंचांगी माननी कही है सुनो सूत्र समवायंग में १२ अंगकी निर्युक्ति आदि माननी कही है।

यत्–आयारेणंपरित्तावायणा संखिज्जा अणु योग द्वारा संखिज्जावेढा संखिज्जा सिलोगा संखिज्जाओ निज्जुत्तिओ संखिज्जाओ पडिवत्तिओ संघयणीओ इत्यादि।

ए आचारंग सूत्रकी निर्युक्ति संख्याति कही है इसी तहरे २२ आंगकी निर्युक्ति मुल पाठ में है।

शतकपच्चाविसउद्द सोतिज्जो । भगवतीअंगपिछाणजी ॥
सूत्र अर्थ निर्युक्तिमानो । या जिनवरकीआणजी ॥प्र० २७

अर्थ सूत्र भगवती शतक २५ उ० ३ मूल पाठ।

यत्र् सुत्तत्थोखलु पडमो । बीउनिज्जुत्ति मिस्सिओ भणिउ

तइओय निरविशेशो । एसविहिहाइ अणुयोगो ॥ १ ॥

अर्थ—पहली सुत्र अर्थ दुजी निर्युक्ति के साथ कहना तीजा निर्वसेस इसीमें टीकाचुर्णे भाष्य समावेश होता है ।

अनुयोगद्वार सूत्र में देखो । निर्युक्ति की वातजी ।
नंदी में निर्युक्तिमानी । छोडोहठमिथ्यारजी ॥प्र०२८ ॥

अर्थ—अणुयोगद्वार सूत्र में निर्युक्ति यतु (सूत्ताणुगमे निज्जुत्ति अणुगमेय) मतलब सूत्र और निर्युक्ती दोनों मॉनणी कहा है आगे नंदी सूत्र सुनो ।

सुत्तत्थोखलुपढपोवीओ । निज्जुत्तीमस्सिओ भणिओ ।
तइओय नरविशेशो । एसविही होइ अणुओगो ॥ १ ॥

अर्थ—पूर्व लिख आये हैं मित्र इतना मूल सुत्र के प्रमाण को नहीं मान के मिथ्या (झूठ) हठ करना क्या विद्वानों का काम है आत्म कल्याण चाहते हो तो इस झूठे कदाग्रह को छोड दो वीर प्रभु के वचनों पर ही आस्ता रक्खो ।

वादी कहे वातो निर्युक्ती । गई काल में वीत जी ।
नविरची आचारिज । ज्यारिकिमआवेपरतीतजी ॥प्र० २६॥

अर्थ—मूल सुत्र में बोलने को जगह न मिली जब कितने गावरी प्रमा लोगों को भ्रम में डालते हैं कि सुत्र में कहिवो प-

चांगी इस काल में विच्छेद हो गइ और अभी जो है वो आचार्यों ने नई रची है उन की क्या परतीत मन्दिर प्रतिमा का अधिकार पीछे से मिला दिया होगा।

सूत्ररहा निर्युक्ती विति, याते किमकरिजांणी जी।
आचारिज रचिया नहिं मानों, सुणजो आगे वांणी जी।
प्रतिमा ॥ ३० ॥

अर्थ—यह आप का कहना तद्दन मिथ्या है लो जो पंचांगी इस काल में विच्छेद हो गइ तो फिर ३२ सुत्र किस तरह से रहेंगे या क्या लुंकाजी के पढने के वास्ते ही ३२ सुत्र की रक्षा करी और किसि सुत्रों की नहीं करी जो उदाई आदि खा गया कहते हो तो क्या आप जैसे उक्त जानवरों को ज्ञान था सो ३२ तो रख दिये और सब खा गये क्या आप लोगों की विद्वाता का परचा है कहां तक तारीफ करें।

प्रिय ! जैसा ३२ सूत्र पूर्वाचार्यों ने पुस्तकारोढ किया है वैसे ही बाकी सुत्र पंचांगी पुस्तकारूढ करी है जो पंचांगी नई रचीक हो तो ३२ सुत्र नया रचा हुवा मानना पडेगा क्या निर्युक्ती आदि में नई गाथा मिला दी तो मूल ३२ सुत्र में नई गाथा मिलाने में उन की कलम पकडने वाला कौन था देखो

उन आचार्य महाराज का वचन जिस जगह जो बोल विसर्जन था उस जगह कह दिया कि तत्व केवल गम प्रिय केवल कदामह बस हो के कहोगे कि हम तो आचार्य की रची पचागी नहीं माने तो आगे सुनो।

तीन छेद भद्र बाहुर, रचिया। पन्नवणाश्यांमाचारजी।
दशवैकालिकसिजंभवकृत, निर्सीथविसारवागणधारजी ॥प्र०३१
देवाड्रिगणी जी नन्दी बनाई। घणा सूत्र का नामजी।
ज्यों वृत्तिका कर्त्ताजाणो। भद्रबाहु स्वांमजी ॥ प्र० ३२ ॥

अर्थ—श्री भद्रबाहु स्वामी आचारागादि ११ सूत्र की निर्युक्ति और ३ छेद सूत्र (कल्प व्यवहार दशासूत्रबंध) बनाया है और २३ में पाठ शमाचार्य पन्नवणा सूत्र बनाया है और श्रीसयंभवसुरी दसवौकालक बनाई श्रीवेशारजागणी लघुनसिथ बनाई श्रीदेवद्धगणी नदी बनाई जिस में, ७३ सूत्र १४००० पईना मानना कहा है।

इस जगह १० मिनट आख मीच के सोचो कि भद्रबाहु स्वामी का ३ सुत्र मानना और १० नहीं मानना दूसरा २३ पाठे २७ पाठे के आचार्य का बनाया मानना और भद्रबाहु स्वामी की निर्युक्ति नहीं माननी यह कितनी विचार की बात है।

प्रिय जब बोल चाल को निर्णय करना है तब तो टीका आदि की सरण लेते हैं जब मूर्ति विषय का काम पडता है तब आप पंचांगी मानने में हिचकते हैं परन्तु कृतघ्नपणे का कितना पाप है वो हृदय में रखना जो टीका न होती तो आप का टव्वा कहां से बनता जो टव्वा नहीं होता तो आपकी क्या दशा होती खैर आगे सुनो ।

प्रकरणमांसुंढालचोपइयां । प्रतिमा देश्रोगोपजी ।
तीजोमहाव्रत्तचोडेभांगो । जिनआज्ञादेवीलोपजी॥ प्र० ३३॥
एक अक्षर उथापेजिणरो । वधेअनन्त संसार जी ।
सूत्र का सूत्र नहीं माने । ए डूबेडूबावणहारजी॥ प्र० ३४॥

अर्थ—सुत्र ग्रंथ प्रकरण से ढाल चोपियां वनाते हैं जिस में जहां मन्दिर प्रतिमा का अधिकार आता है वह कितनेक तो अधिकार निकाल देते हैं जैसे रामचरित्र गजासिंघचरित्र वीरश्रण कुसमश्री चरित्र जय विजयचरित्र मंगल कलस जंबूचरित्र आदि सैकडों ढाल चौपइ हैं कितने ही गोप देते हैं कितने ही हरताल सफेदा लगा देते हैं कहो इस में ग्रन्थकर्त्ता की चोरी भगवान् की चोरी से क्या तुम्हारा माना हुआ तीजा वृत रह सकता सकता हैं अपितु कभी नहीं ॥ ३३ ॥

प्रिय जैन सिद्धातों में एक अक्षर मात्र भी न्यूनादिक परूपणा से अनंत संसार की वृद्धि हुवे तो फेर सूत्र का सूत्र ही नहीं माने उसका तो कहना ही क्या प्रिय जैन सिद्धान्त तो (तीनं णंतारियाणंहं) परन्तु आप तो डुवण डुर्बाणं बन बैठे हैं ज्यादा आपको क्या विशेषण देना चाहिये।

बत्तीससूत्रों में प्रतिमा बोल। चतुरां कोमी जायेजी।
भावदयामुजयटमां व्यापी, उपकारबुद्धि छे मोयजी॥
॥ प्र० २४॥

अर्थ बत्तीस सूत्रो में प्रतिमा का अधिकार है सो हमने बतला दिया है वो चतुर पुरुष जान गये होंगे। प्रिय मेरे किसी से द्वेस भाव नहीं है बल्कि कितने ही भद्रीक जीव उल्टे रास्ते जा रहे हैं उन्हो पर भाव दया लाके उपगार बुद्धिसे ही प्रतिमा छत्तीसी बनाई थी जिस के माहकर्म का क्षेउप सम होगा वही इस भाव को धारण करेगा मेरा तो कहना है कि सर्व जीव जिन शाशन के रहस्य का पान करो और आत्म कल्याण करो करो करो जल्दी करो॥ २५॥

प्रतिमा छत्तीसी सुणोभवी प्राणी। हृदये करो विचारजी।
पक्षछोडि, समकित आराधो। पामोभवनो पारजी॥प्र०२६॥

अर्थ–प्रतिमा छत्तीसी सुन के हृदय में विचार करो परन्तु जब तक पक्षपात है तब तक साधामार्ग मिलना दूर है इसी वास्ते पक्षपात छोड के जिनवचनो पर अशाता रखो तो संसार समुद्र से पार जल्दी हो जावे ॥ इतिः ॥

कलसः रायसिद्धारथ वंसभूषण त्रसला देवी मायजी ।
सासन नायक तीर्थ ओसीया रत्न विजय प्रणमे पायजी ॥
साल बहत्तर जेठमासे सुद पञ्चमी गुरुवार जी ।
गयवर सरणो लियो तेरो सफल भयो अवतारजी ॥ ३७॥

॥ इति सम्पूर्ण ॥

अर्थ सिद्धार्थ राजा के वंश में भूषण समान जिनों की माता त्रसलादे है ऐसे जो श्री वीर प्रभु शाशन के नायक जिनों के बिंब की प्रतिष्टा श्री पार्श्व प्रभु के ६ पाठ श्री रत्न प्रभसुरी वीरनिर्वाण के ७० वर्ष गया स्वहस्तकरी है जिनको आज २३७१ वर्ष हुए हैं ऐसा जो तीर्थ ओसीया नगरी में है जिन के चर्ण धमल में श्री रत्नविजयजी प्रणाम कर रहे है उक्ततीर्थ की यात्रा मैंने हर्ष उत्साह से करी हैं श्री त्रिलोक पूजणीक वीर प्रभु से अर्जी करी है अहो प्रभु आपकी अद्भुत रचना तारण तरण वृद्ध जान के मैंने आपका सरणा लीया है मुझे भी आप

सरीषा वनादो सफल अवतार हुवा जो मैंने आज वीर प्रभू की यात्रा करी प्रतिमा छत्तीसी की रचना संवन् १९७२ जैष्ठसुदी ५ गुरुवार को करी है ॥ इति शुभम् ॥

अब जो असन्तोषचन्दजी के उपदेश प्रतिमा नकल निरूपण का जन्म हुवा है उन्ही की महिमा सुन लीजिये अव्वल तो सन्वन तुका सवैया पेस्तर वणा हुवा था इसी में असन्तोषचन्दजी ने क्या वहादुरी करी दूजे छोटी सी भाषा की पुस्तक ही अन्य पास सोधन कराई तो क्या वो गणधारी की आज्ञा में समझ सकेगा अपितु नहीं। पुस्तक छपाने का कारण तो मैंने सुनाथा कि सतोषचदजी पहले तो ठीक परुपणा करते थे परन्तु उन्ही का एक साधु (केसरीमल) जैन मुनि श्री हर्षमुनि जी पासे फलोधी में जैन दीक्षा ले ली वो कदाग्नी समावेश न हुई जिस से आपकी ज्वलतजला प्रगट कर गोढवाड में अपनी नामवरी फैलाई हैं मैर इनके उत्तर भी इसी किताव में आ गये हैं विशेष देखना हो तो हमारी वनाई सि० प्र० मु नामकी पुस्तक देख लेना।

अव हम (ए पी.) ने तथा असतोकचद्द जो मोतीलाल आदि को हित शिक्षा देते हैं हे वदव आपने लिखा कि गेवरचन्द ने गप्पमारी तथा झूठ लिखा है यह आपका वचन कैसा है सो विचारो श्री तीर्थंकर गणधर पूर्व आचार्य का वचन था

जिसे मैंने लिखा था उसको आप ने गप्प तथा झूठ कह दिया। प्रिय मैं आप टोला छोड दीया तौ मेरे पर द्वेष कर इतनी गालियां दीं उससे संतोष न हुवा तो और १००–२०० देनी थीं परन्तु श्री तीर्थंकर गणधरों के वचन को गप्प झूठ कहना ए आप को लाजिम नहीं था। शायद किसी शांसन द्वेषी के सिखाने से कह दिया हो तो अब भी इस वात का प्रायश्चित ले के अपनी आत्मा को शुद्ध करो मुझे आशा है कि दोनों महानुभाव इस किताव को पढ के अपना नरभव सफल अवश्य करेंगे ॥

